जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2534

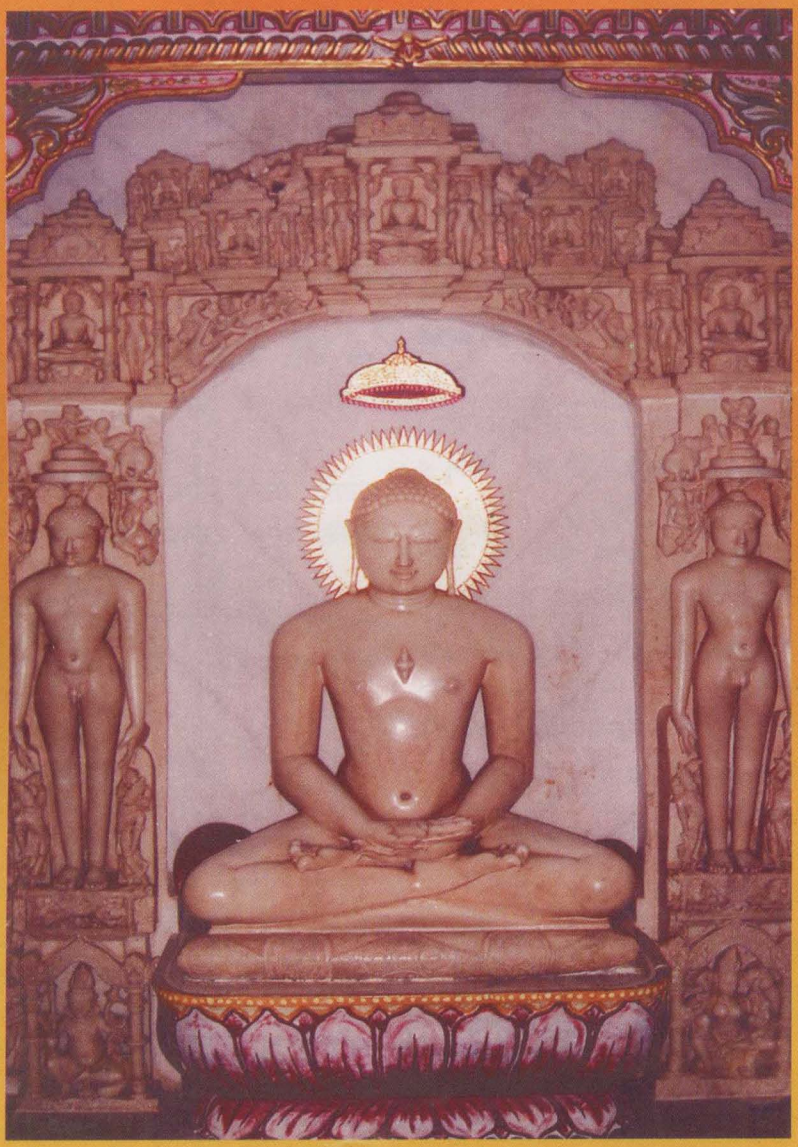

श्री दि. जैन मन्दिर नरायना (जिला-दूदू, राजस्थान)

में विराजमान खुदाई से प्राप्त ८०० वर्ष प्राचीन अतिसुन्दर जिनप्रतिमा

फाल्गुन, वि.सं. 2064 मार्च, 2008

मूल्य 15/

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

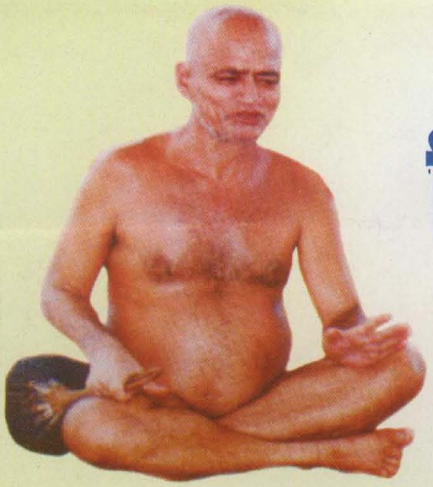

आचार्य श्री विद्यासागर जी के दोहे

73

समरस अब तो चख जरा, सब रस सम बन जाय।
नयनों पर उपनयन हो, हरा, हरा दिख जाय॥

74

सुधी पहिनता वस्त्र को, दोष छुपाने भ्रात!
किन्तु पहिन यदि मद करे, लज्जा की है बात॥

75

हित-मित-नियमित-मिष्ट ही, बोल वचन मुख खोल।
वरना सब सम्पर्क तज, समता में जा 'खोल'॥

76

भार उठा दायित्व का, लिखा भाल पर सार।
उदार उर हो फिर भला, क्यों ना? हो उद्धार॥

77

आगम का संगम हुआ, महापुण्य का योग।
आगम हृदयंगम तभी, निश्छल हो उपयोग॥

78

अर्थ नहीं परमार्थ की, ओर बढ़ें भूपाल।
पालक जनता के बनें, बनें नहीं भूचाल॥

79

दूषण ना भूषण बनो, बनो देश के भक्त।
उम्र बढ़े बस देश की, देश रहे अविभक्त॥

80

नहीं गुणों की ग्राहिका, रहीं इन्द्रियाँ और।
तभी जितेन्द्रिय जिन बने, लखते गुण की ओर॥

81

सब सारों में सार है, समयसार उर धार।
सारा सारासार सो, विसार तू संसार॥

82

विवेक हो ये एक से, जीते जीव अनेक।
अनेक दीपक जल रहे, प्रकाश देखो एक॥

83

दिन का हो या रात का, सपना सपना होय।
सपना अपना सा लगे, किन्तु न अपना होय॥

84

जो कुछ अपने आप है, नहीं किसी पर रूढ़।
अनेकान्त से ज्ञात हो, जिसे न जाने मूढ़॥

85

अपने अपने धर्म को, छोड़े नहीं पदार्थ।
रक्षक-भक्षक जनक सो, कोई नहीं यथार्थ॥

86

खण्डन मण्डन में लगा, निज का ना ले स्वाद।
फूल महकता नीम का, किन्तु कटुक हो स्वाद॥

87

नीर-नीर को छोड़ कर, क्षीर-क्षीर का पान।
हँसा करता, भविक भी, गुण लेता गुणगान॥

88

पक्षपात बिन रवि यथा, देता सदा प्रकाश।
सबके प्रति मुनि एक हो, रिपु हो या हो दास॥

89

घने वनों में वास सो, विविध तपों को धार।
उपसर्गों का सहन भी, समता बिन निस्सार॥

90

चिन्तन मन्थन मनन जो, आगम के अनुसार।
तथा निरन्तर मौन भी, समता बिन निस्सार॥

'सूर्योदयशतक' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UPHIN/2006/16750

मार्च 2008 | मासिक | वर्ष 7, अङ्क 3

जिनभाषित

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल- 462 039 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया, मदनगंज किशनगढ़
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282 002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-2851428, 2852278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	1100 रु.
वार्षिक	150 रु.
एक प्रति	15 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

- ◆ आचार्य श्री विद्यासागर जी के दोहे — आ.पृ. 2
- ◆ मुनि श्री क्षमासागर जी की कविताएँ — आ.पृ. 4
- ◆ **कविता**- आदिनाथ स्तवन : एक भावार्थ : सुरेश जैन 'सरल' — आ.पृ. 3
- ◆ **सम्पादकीय** : स्वागत है, गुणायतन — 2
- ◆ **प्रवचन**
  - निजात्मरमण ही अहिंसा है : आचार्य श्री विद्यासागर जी — 4
- ◆ **लेख**
  - जैन जागरण के अग्रदूत: बाबा भगीरथ जी वर्णी : पं० परमानन्द जैन शास्त्री — 11
  - डॉक्टर या सहृदयता का अवतार : क्षुल्लक श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी — 13
  - शिल्पी चागद वम्भदेव : पं० कुन्दनलाल जैन — 16
  - जागरण-सन्देशक की मूक चीखें : डॉ० ज्योति जैन — 18
  - आखिर क्या हैं निमित्तशास्त्रों की सीमाएँ : डॉ० अनेकान्त जैन — 20
  - अब तो जागो जैनियो! : सुनील जैन 'संचय' — 22
  - कैंसर की जड़ मांसाहार : 'वुमन भास्कर' इन्दौर — 24
  - अनेक रहस्यों को समेटे है जैविक घड़ी- 'अखण्ड ज्योति' — 26
- ◆ **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा — 28
- ◆ **समाचार** — 31, 32

लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
'जिनभाषित' से सम्बन्धित समस्त विवादों के लिये न्यायक्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

स्वागत, गुणायतन

समय बदल रहा है। धर्म प्रभावना के निमित्तों में कभी वैभव प्रदर्शन को मुख्यता दी जाती थी। किंतु अब आकर्षक रूप में तर्कणा के आधार पर वैज्ञानिक पद्धति से धार्मिक सिद्धांतों की प्ररूपता धर्म प्रभावना का मुख्य अंग हो गया है। आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व में ही महान् तार्किक आचार्य समंतभद्र स्वामी ने धर्म के बारे में जन साधारण के अज्ञान अंधकार को दूरकर उनके हृदयों में युक्तियुक्त समीचीन जैनधर्म के माहात्म्य का प्रभाव अंकित करना धर्म प्रभावना कहा है।

भारत भूमि पर जैनियों का सबसे बड़ा एवं सबसे अधिक महत्त्ववाला तीर्थ श्री सम्मेदशिखर है जिसको शाश्वत तीर्थराज कहा जाता है। यहाँ वंदना के लिये अथवा पर्यटन के लिए प्रतिवर्ष लाखों जैन अजैन यात्री आते हैं। यहाँ दिगम्बर श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों के अनेक विशाल मंदिर बने हुए हैं तथा बन रहे हैं। किंतु यात्रियों एवं पर्यटकों को इस वैज्ञानिक जैनधर्म के सिद्धांतों का सामान्य परिचय कराने वाला कोई आकर्षक प्रभावक आयतन अभी तक नहीं बना है। इस अभाव की ओर दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के महान् संत परम पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के प्रभावक शिष्य परम पूज्य श्री प्रमाणसागर जी महाराज का ध्यान गया और उनके मन में इस तीर्थराज की भूमि पर ऐसे आकर्षक आयतन के निर्माण की योजना जागी जिसमें आधुनिक वैज्ञानिक तकनीक के द्वारा प्रकाश एवं ध्वनि के माध्यम से आत्मा के पतन से उत्थान की यात्रा के स्वरूप और कारणों पर सरल भाषा में प्रकाश डाला जाये। पूज्य मुनिश्री ने योजना की एक स्थूल रूपरेखा परम पूज्य आचार्यश्री के पास भिजवाई। उन्होंने योजना पर गहन विचारणा कर अपनी मंगल सहमति प्रदान की किंतु साथ ही यह निर्देश दिए कि योजना का आकार समय में पूर्ण होने की संभावना में बाधक न हो एवं आयोजकों एवं निदेशकों के लिए किसी भी प्रकार की आकुलता का कारण नहीं बने। परम पूज्य आचार्यश्री का मंगल आशीर्वाद पाकर मुनिश्री ने कतिपय श्रद्धालु प्रबुद्ध श्रावकजनों को योजना के प्रारूप का परिचय कराया। अत्यंत हर्ष का विषय है कि उन प्रबुद्ध श्रावकजनों ने योजना को सराहा और उत्साहपूर्वक इसकी पूर्णता के लिए प्रयत्नशील होने की भावना प्रकट की। इस योजना की पूर्णता एवं सफलता के सूचक के रूप में अप्रत्याशित रूप से इसके लिए अत्यंत उपयुक्त भूमि की व्यवस्था सहजता से हो गई।

आयतन का नाम 'गुणायतन' रखने का निर्णय लिया गया। यह जीव अनादिकाल से विषयकषाय रूप अवगुणों से युक्त होकर संसार परिभ्रमण करते हुए दुःख पा रहा है। इस अवगुण युक्त स्थिति से किस प्रकार किस उपाय से छूटकर अपनी आत्मा में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रादि गुणों को उद्भूत कर सकता है और अंत में आत्मा की स्वाभाविक गुणयुक्त अवस्था को प्राप्त कर सकता है इसका दिग्दर्शन जैनधर्म में वर्णित जीव के गुणस्थानों के क्रमिक विकास की कथा से होता है।

जैनधर्म ने ईश्वर का अस्तित्व जन्म से स्वीकार नहीं किया है अपितु यह माना है कि साधारण व्यक्ति भी कर्म से ईश्वरत्व को प्राप्त कर सकता है। उस ईश्वरत्व के विकास के लिए जिस कर्म को कारण माना गया है वह सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित्ररूप रत्नत्रय है। रत्नत्रय की साधना का नाम ही धर्म है। प्रत्येक जीव में ईश्वरत्व शक्ति/गुण है और उसकी उद्भूति रत्नत्रय धर्म के क्रमिक विकास के द्वारा की जा सकती है। विश्व को जैनदर्शन की यह मौलिक देन है कि वह व्यक्ति से भगवान्, नर से नारायण, पतित से पावन, आत्मा से परमात्मा बनने का प्रत्येक जीव को अधिकार प्रदान करता है। ईश्वर बनना अथवा आत्मगुणों की प्राप्ति किसी की कृपा से नहीं अपितु स्वयं के श्रद्धा, ज्ञान एवं आचरण के विकास के लिए किए गए पुरुषार्थ से ही संभव है। ईश्वरत्व की प्राप्ति की योग्यता के विश्वास से व्यक्ति में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्मविश्वास जागरित होता है और उसकी प्राप्ति के उपाय के रूप में गुणों के विकास के लिए रत्नत्रय की साधना के विश्वास से परावलंबन एवं अंधभक्ति की दीनता दूर होकर स्वपुरुषार्थ जागरित होता है।

अत: सर्वोदयी, सर्वकल्याणकारी दिगम्बरजैनधर्म के द्वारा स्थापित व्यक्ति में अपने दुर्गुणों को दूर कर गुणों को जागरित करने के सिद्धांत के जन-जन में प्रचार की मंगल भावना से प्रेरित है यह 'गुणायतन' की प्रभावक योजना। शुभ समाचार यह है कि परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से दिनांक २४ फरवरी २००८ को प्रात:काल के श्रेष्ठ मुहूर्त्त में न्यासीगण एवं अन्य विशिष्ट व्यक्तियों के अतिरिक्त परम पूज्य मुनि श्री प्रमाणसागर महाराज के ससंघ सान्निध्य में 'गुणायतन' का शिलान्यास निर्विघ्न सम्पन्न हो गया है।

आशा है गुणायतन का निर्माण जैनाजैन जनता में दिगम्बर जैनधर्म के सार्वकालिक, सार्वजनीन एवं सर्वोदयी सिद्धांतों को प्रकाश एवं ध्वनि की तकनीक से प्रभावी ढंग से प्रचारित कर उन्हें आत्मगुणों के विकास के लिए पुरुषार्थ की ओर प्रेरित करेगा।

स्वागत है 'गुणायतन'

मूलचन्द्र लुहाड़िया

प्रकाश झा के सीरियल में 'बाहुबली' अपराधी

जैनधर्म के प्रवर्तक प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र भगवान् बाहुबली जैन समाज के प्रमुख आराध्य देवताओं में से एक हैं। जैन समाज में भगवान् बाहुबली का महत्त्वपूर्ण स्थान तो है ही लेकिन दक्षिण भारत के श्रवणबेलगोला में एक ही पत्थर से निर्मित 56 फुट ऊँची भगवान् बाहुबली की विशाल मनमोहक, दर्शनीय प्रतिमा से भला आज कौन परिचित नहीं है, जिसका प्रत्येक 12 वर्ष बाद महामस्तकाभिषेक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होता है। गोम्मटेश के नाम से ख्याति प्राप्त इस प्रतिमा के दर्शनों के लिए देश-विदेश के हजारों पर्यटक, यात्री बाहुबली के चरणों में पहुँचते हैं और वहाँ पहुँचकर जहाँ वह प्रतिमा को देखकर आश्चर्य में पड़ जाते हैं, वहीं उन्हें एक अपूर्व शांति का सुखद अहसास भी होता है।

परन्तु दु:खद है कि ऐसे महान् 'बाहुबली' भगवान् के नाम का गलत प्रयोग आजकल देखा जा रहा है, जो निंदनीय और हास्यास्पद है। अब तो हद हो गयी है, सुप्रसिद्ध फिल्म निर्माता-निदेशक प्रकाश झा मुंबई एक सीरियल लांच कर रहे हैं। जो आपराधिक पृष्ठभूमि से जुड़े लोगों पर केन्द्रित है, जिसका नाम उन्होंने 'बाहुबली' रखा है। यह निश्चित ही केवल जैनियों की श्रद्धा-आस्था पर ही नहीं वरन् सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति पर हमला है। क्या प्रकाश झा कोई दूसरा नाम नहीं रख सकते? जैन समुदाय के किसी विशेष आराध्य देवता के नाम पर इस प्रकार के सीरियल का नाम रखा जाना जैन संस्कृति के साथ खिलवाड़ तथा जैनियों की आस्था और श्रद्धा पर कुठाराघात है। लेकिन जैन समाज भी चुप नहीं बैठेगी और इसका पूरजोर विरोध करेगी।

जैन समुदाय को चाहिए की सभी एकजुटता का परिचय देते हुए इसका प्रबल विरोध करे। प्रकाश झा को सीरियल से 'बाहुबली' शब्द हटाने को मजबूर किया जाय, ताकि जैन अस्मिता पर हो रहे हमले को रोका जा सके। जगह-जगह से विरोध पत्र, एस.एम.एस., ई मेल आदि भेजे जाना चाहिए तथा मीडिया में इसको पूरी तवज्जो देना चाहिए। यदि हम सीरियल से 'बाहुबली' शब्द नहीं हटवा सके तो निश्चित ही यह हमारी बड़ी भूल होगी, जिसके लिए इतिहास हमें कभी माफ नहीं करेगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निजात्म-रमण ही अहिंसा है

प० पू० आचार्य श्री विद्यासागर जी

अहिंसा के अभाव में आत्मोपलब्धि असम्भव है। बाहर आना ही हिंसा है और अन्दर रहना ही अहिंसा है। आत्मविकल हो जाना, आत्मा में आकुलता हो जाना ही हिंसा है।

'जीओ और जीने दो' स्वयं जीओगे तभी दूसरे को जीने दोगे, जिन्हें स्वयं अपना जीना ही पसन्द नहीं उनसे क्रूर और निर्दयी और कौन हो सकता है?

आप भी भगवान् हैं किन्तु एकमात्र हिंसा व अहिंसा का प्रतिफल है कि आप भगवान् के समान होकर भी भगवान् का अनुभव नहीं कर पा रहे हैं।

महावीर भगवान् के निर्वाण के उपरान्त तीर्थंकरों का जो अभाव हुआ वह इस क्षेत्रगत प्राणियों का एक प्रकार से अभाग्य ही कहना होगा। भगवान् के साक्षात् दर्शन व उनकी दिव्य-वाणी के पान करने का जब सौभाग्य प्राप्त होता है तो संसार की असारता के बारे में स्वयं ही ज्ञान एवं विश्वास हो जाता है। भगवान् के माध्यम से जो कार्य हो सकता था वह कार्य उनके उपरांत भी कर सकते हैं। आचार्य परम्परा अक्षुण्ण बनी रहे और उनमें भी प्रौढ़ आचार्य जिनका जीवन हमारे लिये प्रेरणादायक है वे आचार्यकल्प बने रहें। उन्होंने, जिस ओर भगवान् जा चुके हैं- पहुँच चुके हैं, उस ओर जाने का मार्ग प्रशस्त किया। जो संसार से ऊपर उठने की इच्छा रखते हैं उन्हें एक प्रकार का दिग्दर्शन दिया है, दिशाबोध दिया है किंतु यह ध्यान रहे कि उनके दिग्दर्शन का लाभ लेना इतना आसान नहीं है जितना कि हम लोग समझते हैं।

उन्होंने जीवन भर मन्थन, चिन्तन व मनन करके, नवनीत रूप में जो कुछ भी साहित्य प्रस्तुत किया, उसमें अवगाहन करना, उसमें से ही जो कुछ अपने चिन्तन के माध्यम से मैं निकाल सका हूँ वही आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ।

आचार्यों के साहित्य में अध्यात्म की ऐसी धारा बही है कि कोई भी ग्रन्थ उठायें, कोई भी प्रसंग उठायें, उन ग्रन्थों में से कोई भी गाथा ले लें, गाथा में भी कोई भी पद देखें, तो वह पाठक के लिये पर्याप्त होगा, उसमें से वह रस, वह संवेदन, वह अनुभूति पाठक को भी प्राप्त होगी जो उन आचार्यों को प्राप्त हुई थी, इसको प्राप्त करने वाले कितने जीव होंगे? पर इसका अर्थ यह भी नहीं कि उसको कोई भी प्राप्त नहीं कर सकता और न ही यह अर्थ है कि सभी प्राप्त कर लेंगे।

मात्र अहिंसा का सूत्र आप लें। भगवान् महावीर ने 'अहिंसा' की उपासना की, उनके पूर्व तेईस तीर्थंकरों ने उपासना की और उनके पूर्वजों ने भी इस अहिंसा की उपासना की। अहिंसा के अभाव में आत्मोपलब्धि नहीं कर सकते थे। उन्होंने इस अहिंसा के आलम्बन के लिये हम लोगों को भी प्रेरित किया है, आवश्यकता है उस और दृष्टिपात करने की।

विश्व का प्रत्येक प्राणी शांति चाहता है, सुख की इच्छा रखता है और दु:ख से भयभीत होता है। दु:ख निवृत्ति के उपाय में अहर्निश प्रयास करते रहे वही जीवन है, इस हेतु उपदेश भी संसारी जीवों के लिये ही है, संसारी जीवों में भी उन जीवों के लिये है जो वस्तुत: सुख चाहते हैं, प्रत्येक के लिये नहीं। हम सुख चाहते तो हैं, शान्ति चाहते तो हैं किन्तु तात्कालिक सुख, भौतिक सुख चाहते हैं, इन्हीं की इच्छा करते हैं। कल देखा जायेगा, आगे कर लेंगे इसी मान के पीछे अनंत काल खो चुके हैं।

हम अनंतकालीन सुख की इच्छा रखते हैं कि मैं सुखी बना रहूँ इसके लिये ही तो भगवान् ने अहिंसा का उपदेश दिया। वह अहिंसा बहुत गहराई में ही अभी तक पड़ी हुई है। उस अहिंसा का दर्शन करना भी स्वरूप समझना भी इस प्रकार के व्यस्त जीवों के लिए संभव नहीं है। यहाँ पर हजारों व्यक्ति विद्यमान हैं, किंतु वे सब यहाँ पर श्रवण कर रहे हैं ऐसा मैं दृढ़-निश्चय के साथ नहीं कह सकूँगा, यह भी नहीं कह सकूँगा कि आप श्रवण कर ही नहीं रहे, श्रवण तो कर रहे हैं, पर श्रवण करने में भी सबमें कुछ अन्तर हो सकता है। इस समय प्रवचन समाप्ति की ओर बढ़ रहा है और आप के मस्तिष्क में ख्याल है कि प्रवचन समाप्त हो और चलें, यह जो आकुलता है यह जो अशांति है, यह अशांति आप लोगों को उस अहिंसा से दूर रखने में कारण बनती है। आत्मा में आकुलता होना ही हिंसा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, हिंसा का अर्थ आत्मा की आकुलता ही है। संसार में प्राणों के बिखर जाने को ही हिंसा बोलते हैं, वे प्राण शरीराश्रित प्राण हैं। विश्व इस तथ्य को दृढ़ करता है कि दूसरों को पीड़ा देना ही हिंसा है, यह हिंसा की अधूरी परिभाषा है। इस हिंसा के त्याग से जो अहिंसा जब कभी भी आयेगी वह अहिंसा भी अधूरी मानी जायेगी और इसके माध्यम से आत्मा की अनादिकालीन प्यास नहीं बुझ सकेगी।

हमें बचाओ, बचाओ, कह रहे हैं, चिल्ला रहे हैं और आचार्य कह रहे हैं- बचो, बचो! आप कहते हैं- जी जाने दो, जी जाने दो और आचार्य कहते हैं- जीओ, जीओ। कुछ लोग अहिंसा की परिभाषा देते हुए कहते हैं कि भगवान् ने संदेश दिया है कि जीओ और जीने दो। 'जीओ' पहले रखा और 'जीने दो' बाद में रखा, जो जीयेगा वही जीने देगा। जीना प्रथम है जिलाना बाद में। जीना प्रथम है तो किस प्रकार जीना है, प्रथम यह सोचना है। जिलाना बाद में है इसलिये जिलाने की सामग्री को भी बाद में खोजना।

जब भारतीय सभ्यता या साहित्य व पाश्चात्य सभ्यता की तुलना करते हैं तो विदित होता है कि कहाँ पर हिंसा अधिक हो रही है? भारत की तुलना में पाश्चात्य देशों में हिंसा अधिक होती है और हो रही है। जो व्यक्ति सबसे अधिक हत्यारा होता है वहीं हिंसक माना जाता है। विदेशों में दूसरों की हत्यायें अधिक नहीं हुआ करती हैं बल्कि आत्महत्यायें अधिक हुआ करती हैं और यही सबसे अधिक खतरनाक चीज है। स्वयं अपना जीना ही उन्हें पसन्द नहीं है, जो स्वयं के जीने को पसन्द नहीं करते, स्वयं के जीवन के लिये चिन्ता नहीं करते वे व्यक्ति अधिक खतरनाक होते हैं, उनसे क्रूर, निर्दयी और कोई नहीं हो सकेगा। वे दुनिया में शांति देखना पसन्द नहीं करेंगे।

शांति के अनुभव में जो जीवन है, उसका महत्त्व नहीं जानना ही हिंसा का पोषण है। आत्मविकल हो जाना हिंसा है। रात-दिन बेचैनी का अनुभव करना, यही एक मात्र हिंसा है और उस व्यक्ति के माध्यम से काय की, वचन की और मन की जो चेष्टायें होंगी उन चेष्टाओं का प्रभाव दूसरे पर भी पड़ेगा, इसके फलस्वरूप वह 'द्रव्यहिंसा' मानी जायेगी। द्रव्य हिंसा के माध्यम से दूसरे की हिंसा भी हो सकती है और नहीं भी हो सकती।

प्रत्येक धर्म अहिंसा की उपासना के लिये दबाव डालता है, जोर देता है और प्रचार-प्रसार करता है किंतु महावीर भगवान् का संदेश यहीं तक सीमित नहीं रहता, वे कहते हैं कि प्राण दूसरे के नहीं अपने पास भी हैं। दूसरे के प्राणों का विघटन बाद में होगा, पहले अपने ही प्राणों का विघटन होता है। प्रथम, अपने प्राणों को विघटन होना ही वस्तुतः हिंसा है। हिंसा की यह अनोखी परिभाषा है, सही-सही परिभाषा है, यह हिंसा का सत्य स्वरूप है। जो हिंसा का सत्य-स्वरूप जानेगा वही व्यक्ति अहिंसा को प्राप्त कर सकेगा।

'बिन जाने तैं दोष गुणन को कैसे तजिये गहिये।'

दोष क्या है? गुण क्या है? इसका सही-सही निर्णय जब तक हम नहीं कर पायेंगे तब तक गुणों का आदान व दोषों का निवारण नहीं हो सकेगा आज तक हम लोगों ने अहिंसा का अनुमोदन किया है किंतु यहीं तक किया है कि द्रव्य हिंसा से बचकर प्राणीमात्र के जीवन की इच्छा का प्रयास किया, उपचार किया। यह सब कुछ पहले किया और आत्मा की सुरक्षा बाद में। आत्मा की सुरक्षा तब हो सकती है जबकि भावहिंसा से हमारा जीवन बिल्कुल निवृत्त हो जाये और जिस समय भावहिंसा को तोड़ दें, भाव अहिंसा को अपना लें तो उसके अन्तर की महक/खुशबू बाहर भी हो जाये, वह महक अन्दर से बाहर आ जाये।

जो व्यक्ति राग करता है, द्वेष करता है, अपनी आत्मा में व्याकुलता उत्पन्न कर लेता है वह व्यक्ति बंध को प्राप्त होता है और बंधन ही अपने लिये दुःख का कारण है, दुःख रूप है। जो व्यक्ति बंधन को प्राप्त करेगा, उसकी अनुभूति करेगा, दूसरे के ऊपर उसका प्रतिबिम्ब पड़े बिना नहीं रह सकता, वह भी उसका अनुकरण, उसकी नकल करना प्रारम्भ कर देगा।

एक मछली कुएँ में मर जाती है, वह उस सारे जल को गंदा बना देती है। जीने के लिये जो तत्त्व था, जीवन था (जल को जीवन की संज्ञा भी प्राप्त है) वह उसमें समाप्त हो गया, विकृत हो गया वह कुँआ भी विकृत हो गया। इसी प्रकार हमारे स्वयं के अन्दर, हमारी आत्मा के अन्दर जो राग प्रणाली अनादि काल से विद्यमान है, वही एकमात्र 'नाग' है। वह जब तक अन्दर रहेगा, हिंसा भी होगी। हिंसा का कोई संपादनकर्ता है तो वह है राग प्रणाली, राग प्रणाली प्रमाद उत्पन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कराती है। जीवन में प्रमाद, एक प्रकार से हत्या का समर्थन है। जो कोई भी प्रमाद को हिंसा की कोटि में गिनने वाले हैं वे सब भगवान् महावीर के उपासक हैं।

अपना ज्ञान, अपना दर्शन ही प्राण है। जो कुछ अपना जीवन है, वही है उपयोग, वह राग के द्वारा, द्वेष के द्वारा, क्रोध-मान-माया-लोभ के द्वारा विकृत हो जाता है। 'उपयोग' ही, जीवन में क्या उपयोगी है, क्या अनुपयोगी है, इसका सही-सही भेद, सही-सही ज्ञान करा सकता है।

हिंसा दो प्रकार की होती है- प्रथम, द्रव्यहिंसा और द्वितीय भावहिंसा। शारीरिक गुणों का घात करना द्रव्य हिंसा है और आध्यात्मिक जीवन में व्यवधान करना भाव हिंसा है, यह स्व की भी हो सकती है ओर पर की भी हो सकती है। जहाँ पर 'स्व' है वहाँ पर 'पर' भी नियमरूप से है। एक व्यक्ति रोता है तो वह दूसरे को भी रुलाता है। एक व्यक्ति हँसता है तो दूसरा रोता हुआ व्यक्ति भी हँस पड़ता है। फूल को देखकर बच्चा बहुत देर तक रोता नहीं रह सकता। फूल हाथ में पकड़ा दो तो वह रोता-रोता भी खिल जायेगा, हँस जायेगा और माँ को भी हँसा देगा। हँसाये ही, यह नियम नहीं है किंतु जिस समय वह चक्षुरिन्द्रिय का विषय बनेगा उस समय परिवर्तन आये बिना नहीं रह सकता। कोई अकेला रो रहा हो तो किसी दूसरे को क्या दिक्कत हो सकती है? आप अपनी दृष्टि से कह सकते हैं कि मेरा रोना किसी दूसरे के लिये हानिकारक नहीं है किंतु आचार्य उमास्वामी कहते हैं कि शोक करना/दीनता अभिव्यक्त करना सामने वाले व्यक्ति पर भी प्रभाव डाले बिना नहीं रहते।

आप बैठकर दत्तचित्त होकर खाना खा रहे हैं, किसी भी प्रकार के विकार-भाव आपके मन में नहीं हैं, ऐसे समय आपके सामने, एक दस दिन का भूखा व्यक्ति रोटी माँगता हुआ, गिड़गिड़ाता हुआ, आ जाता है तो आपमें परिवर्तन आये बिना नहीं रहेगा। उसका रोना आपके ऊपर प्रभाव डालता है, यह असातावेदनीय कर्मबंध के लिये भी कारण बन सकता है।

इसलिये ऐसा मत समझिये कि हम राग कर रहे हैं, द्वेष कर रहे हैं, हिंसा कर रहे हैं, अपने आप में तड़प रहे हैं, दूसरे के लिये क्या कर रहे हैं? आचार्य कहते हैं इनकी प्रतिच्छाया, प्रतिबिम्ब पड़े बिना नहीं रह सकता।

मेरे गृहस्थाश्रम की बात है, लगभग पन्दह वर्ष पूर्व की। माँ ने कहा- 'अंगीठी के ऊपर भगौनी में दूध है, उसे नीचे उतार कर-दो बर्तनों में निकाल लेना। एक बर्तन में दही जमाना है और एक में दूध ही रखना है। छोटे बर्तन में जामण (दही जमाने हेतु) है और बड़े बर्तन में नहीं है, यह ध्यान रखकर छोटे बर्तन को आधा रखना और बड़े बर्तन को पूरा भर देना। दोनों को पृथक्-पृथक् कमरे में रख देना।' सारा काम तो कर लिया पर दोनों को पृथक् कमरों में न रखकर एक ही कमरे में इक के ऊपर एक बर्तन रख दिया। परिणाम यह निकला कि प्रातः दोनों जमे हुये थे। एक में जामण था दूसरे में नहीं था फिर भी वह जम कैसे गया?

परिवर्तन प्रत्येक समय, प्रत्येक प्राणी में, प्रत्येक द्रव्य में हो रहा है और अड़ौस-पड़ौस में उसका प्रतिबिम्ब पड़ रहा है, प्रतिबिम्ब पड़े बिना रह नहीं सकता। जिसमें जामण था वह जम गया और जिसमें जामण नहीं था वह भी जम गया। जब जड़ दूध में (संगति से) परिवर्तन हो गया तो क्या चेतनद्रव्य में परिवर्तन नहीं होगा, परिवर्तन होगा तो एक दूसरे पर भी उसका प्रभाव पड़ेगा। एक हँसेगा तो दूसरे पर भी उसका प्रभाव पड़ेगा। वह भी हँसेगा हम इस रहस्य को समझ नहीं पाते। इसलिये आचार्यों ने कहा है कि प्रमादी मत बनो, इससे तुम द्रव्यहिंसा व भावहिंसा दोनों से बचोगे और इसके परिणामस्वरूप दूसरे के लिये भी इस प्रकार रास्ता खुल सकता है। वह भी अहिंसा के मर्म को समझ सकता है और महावीर भगवान् के पद-चिन्हों पर चलकर वह भी वहाँ तक पहुँच सकता है जहाँ महावीर भगवान् पहुँचे हैं। यह गहराई बहुत गहरी है, यह रहस्य इतना गुप्त है कि आज तक हमारी बुद्धि भी वहाँ तक नहीं गई है।

बुद्ध कहते हैं कि प्राणियों को बचाओ, यीशु कहते हैं कि प्राणियों को बचाओ, नानक कहते हैं कि दूसरे की सुरक्षा करो, अमुक कहते हैं कि ऐसा करो-वैसा करो किंतु भगवान् महावीर कहते हैं कि स्वयं बचो। दूसरे को बचाओगे? दूसरे को बचाने जाओगे तो, और किसी की हत्या कर दोगे, तुम बचा नहीं सकते इसलिये स्वयं बचो। 'जीओ और जीने दो' तुम खुद जीओगे यही पर्याप्त है, जो खुद जीयेगा वह दूसरे के लिये अबाधित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो जायेगा और दूसरों को जीने देगा। आपका जीवन स्वयं के लिये तो खतरा है ही नहीं, किन्तु दूसरे के लिये भी तभी तक खतरा है जब तक आप प्रमादी बने रहेंगे आकुलता का कारण प्रमाद है, आज का समाज इसी का द्योतक है। 'अप्रमत्तो भव', प्रमाद न करो, एक क्षण के लिये भी प्रमाद मत करो, अप्रमत्त दशा में लीन रहो। आत्मा में विचरण करना ही अप्रमत्त दशा का प्रतीक है, वहाँ राग नहीं, द्वेष नहीं, इसलिये वहाँ पर हिंसा नहीं अहिंसा पल रही है इसकी जय घोषणा आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार में की है। बंधन में वही बंधेगा, फँसेगा जो राग करेगा, द्वेष करेगा, मद करेगा, प्रमाद करेगा और अपनी आत्मा से बाहर दूर रहेगा, चाहे वह संसार की किसी भी गति का प्राणी क्यों न हो। वह देव भी हो सकता है, तिर्यंच भी हो सकता है, नारकी भी हो सकता है और मनुष्य भी हो सकता है। मनुष्य में भी गृहस्थ हो सकता है, और त्यागी भी हो सकता है, संत भी हो सकता है, ऋषि भी हो सकता है। जिस समय वह अपनी राग-द्वेष प्रणाली को और भी जागरित कर देता है, उस समय उससे हिंसा, स्वयं का पतन या हत्या हुये बिना नहीं रहती।

देर-सबेर, रात-दिन, चौबीस घण्टे या अप्रमत्तदशा की ओर बढ़ते रहना, प्रारंभ करें तभी कल्याण है। उस ओर बढ़ो जिस ओर प्रमाद को कोई स्थान नहीं हो, वहीं पर अहिंसा पल सकती है। हिंसा वहाँ पर पलती है जहाँ पर प्रमाद हो 'प्रमाद' का अर्थ क्या है? यह कोई सैद्धांतिक शब्द नहीं, जिससे अच्छा लग रहा हो आप लोगों को। 'प्रमाद' का अर्थ है बावलापन, उन्मत्तदशा, आपे में न रहना। जब हाथी मदोन्मत्त हो जाता है तब वह आपे में नहीं रहता। सबसे अधिक खतरनाक चीज है, आपे में नहीं रहना। आप किसी व्यक्ति को जान सकते हैं, मौन धारण करा सकते हैं, सब कुछ करा सकते हैं, किंतु जिसका मस्तिष्क आपे में नहीं हो उसके ऊपर आपका कोई अधिकार नहीं रहता। वह उत्तेजित है और उन्मत हो रहा है तो उसकी सुरक्षा करना बहुत कठिन है। विदेशों में वैज्ञानिक विकास बहुत हो रहा है किंतु फिर भी वहाँ आत्महत्यायें बहुत अधिक होती हैं, ऐसा क्यों? इसमें कारण है- कि जो आपे में नहीं रहते हैं वही आत्महत्या करता है वही प्रमत्त बन जाता है।

योगी स्वधाम तज बाहर भूल, आता,
सद्ध्यान से स्खलित हो अति कष्ट पाता।
तालाब से निकल, बाहर मीन आता,
होता दुःखी तड़पता मर शीघ्र जाता।

बाहर आना ही उसके लिये अभिशाप का कारण बना। तालाब से मीन (मछली) बाहर आ जाता है तो तड़पता है, दुःखी होता है और मरण को प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार योगी भी क्यों न हो, भोगी की तो बात ही क्या, जिस समय वह अपनी सीमा का उल्लंघन कर देता है अर्थात् अप्रमत्तदशा को खोकर पागलपन का अनुकरण करना प्रारम्भ कर देता है तो फिर ध्यान रहे कि योगी का बस नहीं कि वह कर्मबंधन को रोक सके। बाहर आना ही हिंसा है और अन्दर रहना ही अहिंसा है। अहिंसा की इतनी अमूल्य परिभाषा हमें अन्यत्र नहीं मिलती और यहाँ पर आकर सब दर्शन रुक जाते हैं, महावीर भगवान् की जयपताका आगे बढ़ जाती है। आत्मविजय ही एक मात्र विजय है, आत्मा को हिंसा से बचाने का यदि कोई रास्ता है तो उसे राग और द्वेष से भी बचा सकते हैं।

आज भी अहिंसा का अप्रत्यक्ष रूप से प्रयोग होता है, न्यायालय में। वहाँ पर भाव हिंसा को स्थान प्राप्त है, द्रव्य हिंसा को स्थान नहीं है। भाव हिंसा के आधार से ही न्याय करते हैं। एक व्यक्ति ने बन्दूक से निशाना लगाकर गोली मार दी, निशाना मात्र सीखने के लिये मारा था, निशाना चूक गया और गोली जाकर लग गई एक व्यक्ति को और उसकी मृत्यु हो गई। गोली मारने वाले व्यक्ति को पुलिस ने पकड़ लिया और उससे पूछा गया तुमने गोली मारी? 'मारी है किन्तु मेरा अभिप्राय कुछ और था' मैं निशाना लगाना सीख रहा था, निशाना चूक गया और गोली लग गयी। उसका (इनटेनशन) अभिप्राय खराब नहीं था। उसका संकल्प मारने का नहीं था, उसका संकल्प विद्या सीखने का था, वह चूक गया, यह उसका प्रमाद हुआ। दूसरा व्यक्ति निशाना लगाकर किसी की हत्या करना चाहता है, वह गोली मारता है, गोली लगती नहीं और वह बच जाता है वह गोली मारने वाले को पुलिस को पकड़वा देता है। पुलिस पूछती है- तुमने गोली मारी? मारी तो है, पर उसे गोली लगी कहाँ? लगी तो नहीं किन्तु मारी है कि नहीं, बंद कर दो इसे जेल में, क्यों भैय्या! जीव की हत्या तो हुई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही नहीं इसके उपरान्त भी उसे बंद कर दिया गया और जिससे हत्या हो गयी थी, उसे छोड़ दिया गया, ऐसा क्यों? यह इसलिये कि वहाँ पर द्रव्यहिंसा को नहीं देख रहे, वहाँ पर भाव हिंसा को देख रहे हैं। न्याय जो चलता है, सत्य व असत्य का जो विश्लेषण किया जाता है, वह भावों के ऊपर निर्धारित है। जिस व्यक्ति को भाव सुरक्षा की कोई चिंता नहीं है, उस व्यक्ति की सुरक्षा तीन काल में संभव नहीं है, ऐसा कोई कोर्ट नहीं है, न हमारे यहाँ न भगवान् के यहाँ, भाव की तरफ जिसकी दृष्टि नहीं किन्तु मात्र द्रव्य में पड़ा हुआ है वह व्यक्ति एकमात्र आत्मा को विस्मृत करके इस पुद्गल के पीछे नाच रहा है और अपने आप के शरीरादिक को ही 'खुद' मान रहा है कि 'शरीर मैं हूँ और मैं ही शरीर हूँ' इस प्रकार की कल्पना, इस प्रकार की धारणा ही हिंसा की जननी है।

आप, यह सोचें कि दूसरे का जिलाने की अपेक्षा स्वयं जीना सीखिये। आचार्यों ने लिखा है कि स्वयं तब जिया जाता है तब प्रवृत्ति मिट जाती है, जब एकान्त रूप से वह अप्रमत्त रह जाता है उस समय वह जीता है और जब स्वयं जीता है तो दूसरे को भी जिलाता है, इसलिये कि दूसरे के लिये उसकी किसी प्रकार की मन की, वचन की, काय की और आत्मिक चेष्टा न रहने के कारण वह अपने आप ही जीवित है। उसका जीवन अपने आश्रित है, अपना जीवन अपने आश्रित है, इसलिये मन वचन, काय की किसी प्रकार की चेष्टा न होने से दूसरे के लिये किसी प्रकार की बाधा नहीं है।

भगवान् महावीर क्या चाहते हैं? वे अहिंसा चाहते हैं और अहिंसा में लीन हैं। ऐसी अहिंसा कि हमें अन्यत्र कहीं दर्शन नहीं हो पाते, क्योंकि वे मात्र द्रव्यहिंसा से परहेज रखते हैं, भाव हिंसा से नहीं। इन्द्रिय दमन का यदि कोई शिक्षण मिलता है, प्रशिक्षण मिलता है, तो यहीं पर (महावीर की अहिंसा में) मिलता है, अन्यत्र नहीं और इन्द्रिय दमन ही, कषाय शमन ही एक प्रकार से हिंसा का निराकरण है।

वह अन्दर बैठा आत्मा जो सोच रहा है, उसके माध्यम से ये सब कार्य हो रहे हैं। यह विस्फोट कहाँ से हो रहा है? ध्यान रखें विस्फोट ऊपर से नहीं होता, जो विस्फोट ऊपर से होता है वह इतना खतरनाक नहीं होता जितना गहराई से होने वाला विस्फोट होता है। आत्मा की गहराई में जो राग-प्रणाली, द्वेष-प्रणाली उद्भूत हो जाती है वह अन्दर से लेकर बाहर तक जलाती हुई आ जाती है, उसका फैलाव तीन लोक में फैल जाता है।

आचार्यों की दिव्यध्वनि के माध्यम से यह ज्ञात होगा कि द्रव्य हिंसा व भावहिंसा क्या चीज है? भाव हिंसा व द्रव्य हिंसा का फल क्या होता है यह भी लोगों को विदित होगा।

समुद्र है, वहाँ पर हजारों मछलियाँ होती है और उनमें सबसे बड़ा मच्छ माना जाता है, वह मुँह फाड़ कर सो जाता है उसके मुँह में से अनेक छोटी मछलियाँ आती जाती रहती हैं। जब कभी भूख लगती है वह मुख को बंद कर लेता है, अन्दर की सारी मछलियाँ अन्दर रह जाती हैं, अनेकों मछलियाँ पेट में चली जाती हैं, वे अन्दर ही अन्दर हजम हो जाती हैं, जब चाहता है, भूख मिटने के बाद पुनः मुँह खोल देता है छोटी-छोटी मछलियाँ फिर स्वतन्त्र यात्रा प्रारम्भ कर देती हैं। इस दृश्य को देखकर एक छोटा मच्छ जिसे तन्दुल मच्छ बोलते हैं जिसका आकार भी बहुत छोटा होता है वह सोचता है कि यह राघव मच्छ भी कितना पागल है इसका दिमाग ही नहीं दिखता, इतनी मछलियाँ आ रही हैं, जा रही हैं और यह मुँह बंद नहीं करता। यदि इसके स्थान पर मैं होता तो मुँह बंद करता ही रहता, खोलता ही नहीं, एक साथ ही सबको हजम कर लेता। देखिये, स्थिति कितनी गंभीर है। उसकी हिंसा की वृत्ति कहाँ तक पहुँच चुकी है? चरम सीमा तक, अनन्त को खाने की लिप्सा। खाता एक भी नहीं क्योंकि इतनी शक्ति नहीं लेकिन मन के माध्यम से तो खा ही लेता है, आचार्य कहते हैं कि मन के माध्यम से खाना ही खाना है, बाहर से खाना, खाना थोड़े ही होता है। संकल्प कर लिया, अभिप्राय कर लिया, मन विकृत हो चुका, मन का संकल्प हो चुका कि मैं खाऊँ, बस खाता ही रहूँ यह महान् खतरनाक बात है। वह मच्छ बिना लिप्सा के जितनी आवश्यकता होती है उतना ही खाता है और उस तन्दुल मच्छ ने एक भी मछली को नहीं मारा पर लिप्सा पूरी है इसलिए उस तन्दुल मच्छ को कहाँ जाना पड़ता है? वह सीधा सप्तम पृथ्वी का टिकिट खरीद लेता है। यह है भाव हिंसा। वहाँ द्रव्यहिंसा नहीं हो रही पर उसे भी सप्तम पृथ्वी तक जाना पड़ा, जिसको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महानरक बोलते हैं, रौरव नरक बोलते हैं, वहाँ पर उसे प्रवेश मिला।

आप लोग भाव हिंसा व द्रव्य हिंसा को समझें, अपने जीवन को द्रव्य हिंसा से ही निवृत्त करना पर्याप्त नहीं है, हाँ ये लौकिक अहिंसा है। दूसरे को धक्का नहीं लगाना किन्तु धक्का लगे बिना भी तो नहीं रहता।

आप अपने में रहते हैं पर अपने में रहकर भी आपका मन तो अपने में नहीं है आपका वचन भी तो अपने में नहीं है, आपकी प्रवृत्तियाँ, आपकी चेष्टायें ही अपने में नहीं हैं तो आप दूसरे के लिए रात-दिन काँटों का काम कर रहे हैं।

आचार्य कहते हैं कि एक व्यक्ति कोई गलती करता है तो वह एकांतरूप में अपने आप ही नहीं करता, उसमें दूसरे का भी हाथ अवश्य है। इसका अर्थ क्या हुआ? इसका अर्थ यह हुआ कि हम पूर्ण अहिंसक बन जायें तो दूसरा भी अहिंसक बनेगा और हम अधूरे अहिंसक बने रहेंगे तो दूसरे भी अधूरे रहेंगे।

दूसरे के धन को देखकर ईर्ष्या अथवा स्पर्धा करने में भी हिंसा के भावों की उद्भूति होती है। आज तक हमने अहिंसा को देखा नहीं, जाना नहीं, पहचाना नहीं और पहचानने के भाव भी नहीं किये।

जो राग करेगा, द्वेष करेगा वह बंधनबद्ध होगा, वह स्वयं रोयेगा और दूसरे को रुलायेगा और जो व्यक्ति वीतराग बनेगा, अलगाव भाव रखेगा वह स्वयं सुखी होगा और दूसरे को सुखी बनाने में कारण सिद्ध होगा। यह भाव अहिंसा व भाव हिंसा दोनों ही मानव पर, एक दूसरे पर, प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकते। आपका जीवन हिंसा से दूर हो और अहिंसामय बन जाये मैं आपको यही उपदेश देता हूँ किन्तु मेरा कहना तो तब ही प्रभावमय बन सकता है, जब कि आप भी उसके लिये उत्साहित हों, उसमें कुछ रुचि लें, जब तक अभिरुचि नहीं होती है, तब तक किसी भी क्षेत्र में उन्नति संभव नहीं होती, प्रगति भी नहीं होती। अहिंसा के क्षेत्र में आपकी प्रगति चाहता हूँ किन्तु प्रगति के पूर्व गति की आवश्यकता है। अभी आपकी गाड़ी हिल नहीं रही अभी वह पटरी पर आने के बाद एक बार भी धक्का लगा दो तो प्रारम्भ हो जायेगी, पूर्व संस्कार के कारण कार्य हो जायेगा किन्तु एक बार तो हिले वह यहाँ से। आप करना तो चाहें एक बार! आप करना ही नहीं चाह रहे। आपके जीवन पर आपका अधिकार है, पर अधिकार होते हुए भी कुछ प्रेरणा बाहर से ली जा सकती है। मैं आपको सलाह दे सकता हूँ, राय दे सकता हूँ, आपको कुछ संबोधन दे सकता हूँ, यदि आपका उपयोग इस अर्थ को समझे, आप की बुद्धि इसको मंजूर करे तब ये आगे के कार्य हो सकते हैं, जबतक आपकी स्वीकृति नहीं है तो आगे के कार्य सम्पन्न कैसे हो सकते हैं? बाहर से तो आप इसकी प्राप्ति के लिए आतुर दिखते हैं किन्तु अन्दर से कोई लक्षण नहीं फूट रहा है।

आप बाहर मत देखिये, अपने में देखिये। एक व्यक्ति जो अपने जीवन को सच्चाई पर आरूढ़ कर लेता है, वह तो सुखी बन ही जाता है, साथ ही दूसरे के लिये भी वह सहायक बन जाता है। आप मात्र दूसरों को जिलाने में लगे हुये हैं।

भगवान् महावीर ने एक प्रकार से अहिंसा का प्रचार नहीं किया, संदेश नहीं दिया, यह देने की चीज भी नहीं है। तब बिना दिये इसका प्रचार-प्रसार हुआ कैसे? कस्तूरी का प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता नहीं है, जो सत्यता है, रियलिटी है- उसका प्रभाव अवश्य पड़ता है, किंतु तब, जब कि सामने वाला व्यक्ति उसको देखना चाहे।

महावीर भगवान् ने लोगों को कभी छोटा नहीं देखा, छोटा नहीं समझा, उन्होंने सबको पूर्ण देखा है और पूर्ण जाना है और पूर्ण समझा है। आप भी भगवान् हैं किन्तु एक मात्र हिंसा का प्रतिफल है कि आप भगवान् के समान होकर भी भगवान् का अनुभव नहीं कर पा रहे हैं। आपकी शक्ति का अनुभव मात्र इसलिये नहीं हो पा रहा है कि उस शक्ति को आपने बाँध रखा है, वह अन्दर है, गुप्त है, वहाँ तक पहुँचने के लिये अन्य कोई रास्ता नहीं है, जब तक राग प्रणाली चलेगी तब तक सुख का कोई रास्ता नहीं मिल सकता।

भाव हिंसा के माध्यम से आत्मा की हत्या हुआ करती है और द्रव्यहिंसा के माध्यम से शरीर की हिंसा हुआ करती है, उसके उपरान्त और विशेष चेष्टाओं के माध्यम से दूसरे के शरीराश्रित प्राणों का भी विघटन हो सकता है। भाव अहिंसा के माध्यम से दूसरे का कल्याण हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। किंतु आत्मा का कल्याण होता ही है। आचार्य कुन्दकुन्द की वाणी में यह बात आ जाती है-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदहिदं कादव्वं जं सक्कइ तं परहिदं च कादव्वं।
आद-हिद, परहिदादो, आद हिदं सुट्ठु कादव्वं॥

आत्मा का हित सर्वप्रथम करना चाहिये। परहित व आत्महित की तुलना करते हुए समीचीन कौन-सा है? उन्होंने उत्तर दिया- आद-हिद-परहिदादो, आद-हिदं सुट्ठकादव्वं-अर्थात् दोनों में अच्छा आत्महित है। आत्मा ने अपना हित सोच लिया तो बस समझिये उसने परमात्मा का रूप धारण कर लिया और महावीर बन गये।

अहिंसा धर्म की उपासना कीजिये। भाव अहिंसा, आत्मा के उत्थान के लिये सोपान एवं मंजिल है और द्रव्य अहिंसा, अड़ोसी-पड़ोसी में सुख-शांति का विस्तार करने वाला है। इस प्रकार स्व व पर का कल्याण इन दोनों अहिंसा पर ही निर्धारित हैं, आधारित हैं। किंतु यह ध्यान रखें कि पर के कल्याण की दृष्टि रखेंगे तो अपनी भाव अहिंसा सहायक है, माध्यम है यही है 'जीयो और जीने दो'। प्रत्येक व्यक्ति अपनी चिन्ता करेगा तो फिर कोई दु:खी नहीं रहेगा। यह आध्यात्म का रहस्य है- अपने को जानो, अपने को पहचानो, अपनी सुरक्षा करो, अपने में ही सब कुछ है। पहले विश्व को भूलो और आत्मा को जानो, जब आत्मा को जान जाओगे तो विश्व स्वयं सामने प्रकट हो जायेगा। वस्तुत: अहिंसा के माध्यम से ही स्व-पर कल्याण संभव है।

धर्म का प्रचार उस पर चलने से, आचरण करने से होगा। महावीर के पथ पर चलना ही उनके धर्म का प्रचार-प्रसार करना है। बातों-बातों में प्रचार-प्रसार नहीं होता।

'चरण आचरण की ओर' से साभार

नजर

सुमेरचन्द्र जैन

नजर तो नजर है, नजर से नजारा,
चाहोगे जैसा नजर आयेगा।
नजर तो है एक आइने की तरह,
अश्क खुद का ही उसमें नजर आयेगा॥ १॥
रखते रहते नजर, दूसरों पर सभी,
एक नजर भी कभी खुद पर डाली नहीं।
भूल बस एक यही, करते रहते सभी,
भूल खुद की नजर, खुद को आती नहीं॥ २॥
जब बसा खोट हो, खुद अपनी ही नजर,
खोट ही खोट सबमें नजर आयेगा।
मदभरी हो नजर, या हो तिरछी नजर,
सच कभी भी न तुमको नजर आयेगा॥ ३॥
पा सकोगे खुदा, जो नजर ही नहीं,
खुद को नजरे बिना, खुद को जाने बिना।
वह नजर ही नहीं, जो नजर चाहिये,
खुद में खोजो खुदा बस खुदा के लिये॥ ४॥
पेश करता नजर, इक नजर के लिये,
करके देखो नजर नाक की सीध में।
तब मिलेगा खुदा, सच नजर आयेगा,
सीधी कर लो नजर, बस खुदा के लिये॥ ५॥

हनुमान कॉलोनी, गुना (म.प्र.)

आपके पत्र

जिनभाषित का जनवरी 08 अंक मिला। पत्रिका हाथ आते ही शुरू से अंत तक एक बार में ही पढ़ डाला। एक शानदार ज्ञानवर्धक पत्रिका पूरी पढ़े बिना मन नहीं मानता। आचार्य श्री विद्यासागर जी के दोहे बहुत अच्छे लगे। उनके परम शिष्य मुनि क्षमासागर जी की कविताएँ मन को अंदर तक छूती चली जाती हैं। बहुत गहराई होती है उनके काव्य में। उनकी चार लाइनें बहुत कुछ सोचने पर मजबूर कर देती हैं। पं० तेजपाल काला का लेख जिनवाणी का उद्गम और उसका विकास जानकारियों से युक्त है। डॉ० ब्रजेन्द्रनाथ शर्मा ने विदेशी संग्रहालय में महत्त्वपूर्ण प्रतिमाएँ बावत वहाँ की जैन मूर्तियों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है इसकी जानकारी बहुत कम लोगों को है। डॉ० निजाम उद्दीन ने सही लिखा है कि जैनधर्म विश्व शांति में सहायक है। आपको विश्व में शांति स्थापित करने के लिए अपरिग्रहवाद के मार्ग पर चलना होगा, तभी शांति हो सकती है, जैन सिद्धान्तों का पालन कर विश्वशांति पाई जा सकती है। पत्रिका का हर लेख, कविता, प्रसंग पठनीय है।

राजेन्द्र पटोरिया
पूर्व संपादक, खनन भारती
आजाद चौक, सराफा नागपुर (महाराष्ट्र)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन जागरण के अग्रदूत : बाबा भागीरथ जी वर्णी

पं० परमानन्द जैन शास्त्री

बाबा भागीरथजी वर्णी जैनसमाज के उन महापुरुषों में से थे, जिन्होंने आत्मकल्याण के साथ-साथ दूसरों के कल्याण की उत्कट भावना को मूर्त रूप दिया है। बाबाजी जैसे जैनधर्म के दृढ़श्रद्धानी, कष्टसहिष्णु और आदर्श त्यागी संसार में विरले ही होते हैं। आपकी कषाय बहुत ही मन्द थी। आपने जैनधर्म को धारणकर उसे जिस साहस एवं आत्मविश्वास के साथ पालन किया है, वह सुवर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य है। आपने अपने उपदेशों और चरित्रबल से सैकड़ों जाटों को जैनधर्म में दीक्षित किया है- उन्हें जैनधर्म का प्रेमी और दृढ़श्रद्धानी बनाया है, और उनके आचार-विचार-सम्बन्धी कार्यों में भारी सुधार किया है। आपके जाट शिष्यों में से शेरसिंह जाट का नाम खासतौर से उल्लेखनीय है, जो बाबाजी के बड़े भक्त हैं। नगला जिला मेरठ के रहनेवाले हैं और जिन्होंने अपनी प्रायः सारी सम्पत्ति जैन-मंदिर के निर्माण कार्य में लगा दी है। इसके सिवाय खतौली और आस-पास के दस्सा भाइयों को जैनधर्म में स्थित रखना आपका ही काम था। आपने उनके धर्मसाधनार्थ जैनमन्दिर का निर्माण भी कराया है। आपके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि आप अपने विरोधी पर भी सदा समदृष्टि रखते थे और विरोध के अवसर उपस्थित होने पर माध्यस्थ्य वृत्ति का अवलम्बन लिया करते थे और किसी कार्य के असफल होने पर कभी भी विषाद या खेद नहीं करते थे। आपको भवितव्यता की अलंघ्य शक्ति पर दृढ़ विश्वास था। आपके दुबले-पतले शरीर में केवल अस्थियों का पंजर ही अवशिष्ट था, फिर भी अन्त समय में आपकी मानसिक सहिष्णुता और नैतिक साहस में कोई कमी नहीं हुई थी। त्याग और तपस्या आपके जीवन का मुख्य ध्येय था, जो विविध प्रकार के संकटों विपत्तियों में भी आपके विवेक को सदा जाग्रत (जागरूक) रखता था। खेद है कि वह आदर्श त्यागी आज अपने भौतिक शरीर में नहीं है, उनका ईसरी में 26 जनवरी सन् 42 को समाधिमरण पूर्वक स्वर्गवास हो गया है। फिर भी उनके त्याग और तपस्या की पवित्र स्मृति हमारे हृदय को पवित्र बनाये हुए है और वीरसेवामन्दिर में आपका 3॥ मास का निवास तो बहुत ही याद आता है।

बाबाजी का जन्म सं० 1925 में मथुरा जिले के पण्डापुर नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता का नाम बलदेवदास और माता का मानकौर था। तीन वर्ष की अवस्था में पिता का और ग्यारह वर्ष की अवस्था में माता का स्वर्गवास हो गया था। आपके माता-पिता गरीब थे, इस कारण आपको शिक्षा प्राप्त करने का कोई साधन उपलब्ध न हो सका। आपके माता-पिता वैष्णव थे। अतः आप उसी धर्म के अनुसार प्रातः काल स्नान कर यमुना-किनारे राम-राम जपा करते थे और गीली धोती पहने हुए घर आते थे। इस तरह आप जब चौदह-पन्द्रह वर्ष के हो गये, तब आजीविका के निमित्त दिल्ली आये। दिल्ली में किसी से कोई परिचय न होने के कारण सबसे पहले आप मकान की चिनाई के कार्य में ईंटों को उठाकर राजों को देने का कार्य करने लगे। उससे जब 5-6 रुपये पैदा कर लिये, तब उसे छोड़कर तौलिया रूमाल आदि का बेचना शुरू कर दिया। उस समय आपका जैनियों से बड़ा द्वेष था। बाबाजी जैनियों के मुहल्ले में ही रहते थे और प्रतिदिन जैनमंदिरों के सामने से आया जाया करते थे। उस रास्ते जाते हुए आपको देखकर एक सज्जन ने कहा कि आप थोड़े समय के लिए मेरी दुकान पर आ जाया करो। मैं तुम्हें लिखना-पढ़ना सिखा दूँगा। तब से आप उनकी दुकान पर नित्यप्रति जाने लगे। इस ओर लगन होने से आपने शीघ्र ही लिखने-पढ़ने का अभ्यास कर लिया।

एक दिन आप यमुनास्नान के लिए जा रहे थे, कि जैनमंदिर के सामने से निकले। वहाँ 'पद्मपुराण' का प्रवचन हो रहा था। रास्ते में आपने उसे सुना, सुनकर आपको उससे बड़ा प्रेम हो गया और आपने उन्हीं सज्जन की मार्फत पद्मपुराण का अध्ययन किया। इसका अध्ययन करते ही आपकी दृष्टि में सहसा नया परिवर्तन हो गया और जैनधर्म पर दृढ़ श्रद्धा हो गई। अब आप रोज जिनमंदिर जाने लगे तथा पूजन-स्वाध्याय नियम से करने लगे। इन कार्यों में आपको इतना रस आया कि कुछ दिन पश्चात् आप अपना धन्धा छोड़कर त्यागी बन गये, और आपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाल ब्रह्मचारी रहकर विद्याभ्यास करने का विचार किया। विद्याभ्यास करने के लिए आप जयपुर और खुर्जा गये। उस समय आपकी उम्र पच्चीस वर्ष की हो चुकी थी। खुर्जा में अनायास ही पूज्य पं० गणेशप्रसाद जी का समागम हो गया, फिर तो आप अपने अभ्यास को और भी लगन तथा दृढ़ता के साथ सम्पन्न करने लगे। कुछ समय धर्मशिक्षा को प्राप्त करने के लिए दोनों ही आगरे में पं० बलदेवदास जी के पास गये और पूज्यपाद की सर्वार्थसिद्धि का पाठ प्रारम्भ हुआ। पश्चात् पं० गणेशप्रसाद जी की इच्छा अजैन न्याय के पढ़ने की हुई, तब आप दोनों बनारस गये और वहाँ भेलूपुरा की धर्मशाला में ठहरे।

एक दिन आप दोनों प्रमेयरत्नमाला और आप्तपरीक्षा आदि जैन न्याय-सम्बन्धी ग्रन्थ लेकर पं० जीवनाथ शास्त्री के मकान पर गये। सामने चौकी पर पुस्तकें और 1 रु. गुरुदक्षिणा स्वरूप रख दिया, तब शास्त्री जी ने कहा- ''आज दिन ठीक नहीं है कल ठीक है।'' दूसरे दिन पुनः निश्चित समय पर उक्त शास्त्रीजी के पास पहुँचे। शास्त्रीजी अपने स्थान से पाठ्य स्थान पर आये और आसन पर बैठते ही पुस्तकें और रुपया उठाकर फेंक दिया और कहने लगे कि 'मैं ऐसी पुस्तकों का स्पर्श तक नहीं करता।' इस घटना से हृदय में क्रोध का उद्वेग उत्पन्न होने पर भी आप दोनों कुछ न कह सके और वहाँ से चुपचाप चले आये। अपने स्थान पर आकर सोचने लगे कि यदि आज हमारी पाठशाला होती तो क्या ऐसा अपमान हो सकता था? अब हमें यही प्रयत्न करना चाहिए, जिससे यहाँ जैनपाठशाला की स्थापना हो सके और विद्या के इच्छुक विद्यार्थियों को विद्याभ्यास के समुचित साधन सुलभ हो सकें। यह विचार कर ही रहे थे कि उस समय कामा मथुरा के ला० झम्मनलाल ने, जो धर्मशाला में ठहरे हुए थे, आपका शुभ विचार जानकर एक रुपया प्रदान किया। उस एक रुपये के 64 कार्ड खरीदे गये, और 64 स्थानों को अभिमत कार्य की प्रेरणारूप में डाले गये। फलस्वरूप बाबा देवकुमारजी आरा ने अपनी धर्मशाला भदैनी घाट में पाठशाला स्थापित करने की स्वीकृति दे दी। और दूसरे सज्जनों ने रुपये आदि के सहयोग देने का वचन दिया। इस तरह इन युगल महापुरुषों की सद्भावनाएँ सफल हुईं और पाठशाला का कार्य छोटे से रूप में शुरू कर दिया गया। बाबाजी उसके सुपरिण्टेण्डेण्ट बनाये गये। यही स्याद्वाद महाविद्यालय के स्थापित होने की कथा है, जो आज भारत के विद्यालयों में अच्छे रूप से चल रहा है और जिसमें अनेक ब्राह्मण शास्त्री भी अध्यापन कार्य करते आ रहे हैं। इसका पूरा श्रेय इन्हीं दोनों महापुरुषों को है।

पूज्य बाबा भागीरथजी वर्णी और पूज्य पं० गणेश प्रसाद जी वर्णी का जीवनपर्यन्त प्रेमभाव बना रहा। बाबाजी हमेशा यही कहा करते थे कि पं० गणेशप्रसाद जी ने ही हमारे जीवन को सुधारा है। बनारस के बाद आप देहली, खुर्जा, रोहतक, खतौली, शाहपुर आदि जिन-जिन स्थानों पर रहे, वहाँ की जनता का धर्मोपदेश आदि के द्वारा महान् उपकार किया है।

बाबाजी ने शुरू से ही अपने जीवन को निःस्वार्थ और आदर्श त्यागी के रूप में प्रस्तुत किया है। आपका व्यक्तित्व महान् था। जैनधर्म के धार्मिक सिद्धान्तों का आपको अच्छा अनुभव था। समाधितंत्र, इष्टोपदेश, स्वामि-कार्तिकेयानुप्रेक्षा, बृहत्स्वयंभूस्तोत्र और आप्तमीमांसा तथा कुन्दकुन्दाचार्य के ग्रन्थों के आप अच्छे मर्मज्ञ थे और इन्हीं का पाठ किया करते थे। आपकी त्यागवृत्ति बहुत बढ़ी हुई थी। 40 वर्ष से नमक और मीठे का त्याग था, जिह्वा पर आपका खासा नियन्त्रण था, जो अन्य त्यागियों में मिलना दुर्लभ है। आप अपनी सेवा दूसरों से कराना पसन्द नहीं करते थे। आपकी भावना जैनधर्म को जीवमात्र में प्रचार करने की थी और आप जहाँ कहीं भी जाते थे, सभी जातियों के लोगों से मांस-मदिरा आदि का त्याग करवाते थे। जाट भाइयों में जैनधर्म के प्रचार का और दस्सों को अपने धर्म में स्थित रहने का जो ठोस सेवाकार्य किया है, उसका समाज चिरऋणी रहेगा।

अनेकान्त, मार्च, १९४२

'जैन जागरण के अग्रदूत' से साभार

हमने काँटों को भी नरमी से छुआ है, लेकिन,
लोग बेदर्द हैं, फूलों को मसल देते हैं।

फानी बदायूनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डॉक्टर या सहृदयता का अवतार

क्षुल्लक श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी

एक दिन बाईजी (धर्ममाता चिरौंजाबाई जी) बगीचे में सामायिक पाठ पढ़ने के अनन्तर-

'राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन अपनी-अपनी बार॥'

आदि बारह भावना पढ़ रही थीं। अचानक एक अँग्रेज, जो उसी बाग में टहल रहा था, उनके पास आया और पूछने लगा- 'तुम कौन हो।' बाईजी ने आगन्तुक महाशय से कहा- 'पहले आप बताइये कि आप कौन हैं? जब मुझे निश्चय हो जावेगा कि आप अमुक व्यक्ति हैं तभी मैं अपना परिचय दे सकूँगी।' आगन्तुक महाशय ने कहा- 'हम झाँसी की बड़ी अस्पताल के सिविलसर्जन हैं, आँख के डॉक्टर हैं और लन्दन के निवासी अंग्रेज हैं।' बाईजी ने कहा- 'तब मेरे परिचय से आपको क्या लाभ?' उसने कहा कुछ लाभ नहीं, परन्तु तुम्हारे नेत्र में मोतियाबिन्द हो गया है। एक आँख का निकालना तो अब व्यर्थ है, क्योंकि उसके देखने की शक्ति नष्ट हो चुकी है। पर दूसरे आँख में देखने की शक्ति है। उसका मोतियाबिन्द दूर होने से तुम्हें दीखने लगेगा।'

अब बाईजी ने उसे अपनी आत्मकथा सुनाई, अपनी द्रव्य की व्यवस्था, धर्माचरण की व्यवस्था आदि सब कुछ उसे सुना दिया और मेरी ओर इशारा कर यह भी कह दिया कि इस बालक को मैं पाल रही हूँ तथा इसे धर्मशास्त्र पढ़ाने के लिये बनारस रखती हूँ। मैं भी वहाँ रहती थी, पर आँख खराब हो जाने से यहाँ चली आई हूँ।

उसने पूछा- 'तुम्हारा निर्वाह कैसे होता है?' बाईजी ने कहा-'मेरे पास १०००० रु. हैं, उसका १०० रु. मासिक सूद आता है, उसी में मेरा, लड़की का, इसकी माँ का और इस बच्चे का निर्वाह होता है। आँख के जाने से मेरा धर्म कार्य स्वतन्त्रता से नहीं होता।' डॉक्टर महोदय ने कहा- 'तुम चिन्ता मत करो, हम तुम्हारी आँख अच्छी कर देगा।' बाईजी ने कहा- महाशय! मैं आपका कहना सत्य मानती हूँ, परन्तु एक बात मेरी सुन लीजिये, वह यह कि मैं एक बार झाँसी की बड़ी अस्पताल में गई थी। वहाँ पर एक बंगाली महाशय ने मेरी आँख देखी और ५० रु. फीस माँगी। मैंने देना स्वीकार किया, परन्तु उन्होंने यह कहा कि 'भारतवर्ष के मनुष्य बड़े बेईमान होते हैं। तुम्हारे शरीर से तो यह प्रत्यय होता है कि तुम धनशाली हो, परन्तु कपड़े दरिद्रों जैसे पहने हो।' मुझे उसके यह वचन तीर की तरह चुभे। भला आप ही बतलाइये जो रोगी के साथ ऐसे अनर्थपूर्ण वाक्यों का व्यवहार करे उसमें रोगी की श्रद्धा कैसे हो? इसी कारण मैंने यह विचार कर लिया था कि अब परमात्मा का स्मरण करके ही शेष आयु बिताऊँगी, व्यर्थ ही खेद क्यों करूँ? जो कमाया है उसे आनन्द से भोगना ही उचित है। सुनकर डॉक्टर साहब बहुत प्रसन्न हुए। बोले- 'अच्छा हम अपना दौरा केंसल करते हैं। सात बजे डॉकगाड़ी से झाँसी जाते हैं। तुम पेंसिजर गाड़ी से झाँसी अस्पताल में कल नौ बजे आओ, वहीं तुम्हारा इलाज होगा। बाईजी ने कहा- 'मैं अस्पताल में न रहूँगी, शहर की परवार धर्मशाल में रहूँगी और नौ बजे श्री भगवान् का दर्शन-पूजन कर आऊँगी। यदि आपकी मेरे ऊपर दया है तो मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिये।' डाक्टर महोदय न जाने बाईजी से कितने प्रसन्न थे। बोले- 'तुम जहाँ ठहरोगी, मैं वहीं आ जाऊँगा, परन्तु आज ही झाँसी जाओ, मैं जाता हूँ।'

डॉक्टर साहब चले गये। हम, बाई जी और विनिया रात्रि के ११ बजे की गाड़ी से झाँसी पहुँच गये। प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर धर्मशाला में आ गये। इतने में ही डॉक्टर साहब मय सामान के आ पहुँचे। आते ही साथ उन्होंने बाईजी को बैठाया और आँखों में एक औजार लगाया जिससे वह खुली रहे। जब डॉक्टर साहब ने आँख खुली रखने का यन्त्र लगाया तब बाईजी ने कुछ सिर हिला दिया। डॉक्टर साहब ने एक हलकी सी थप्पड़ बाईजी के सिर में दे दी। न जाने बाईजी किस विचार में निमग्न हो गईं। इतने में ही डॉक्टर साहब ने अस्त्र से मोतियाबिन्द निकाल कर बाहर कर दिया और पाँचों अंगुलियाँ उठाकर बाईजी के नेत्र के सामने की तथा पूछा कि बताओ कितनी अंगुलियाँ हैं? बाईजी ने कहा- 'पाँच।' इस तरह दो या तीन बार पूछकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आँख में दवाई आदि लगाई। पश्चात् सीधा पड़े रहने की आज्ञा दी। इसके बाद डॉक्टर साहब १६ दिन और आये। प्रतिदिन दो बार आते थे। अर्थात् ३२ बार डॉक्टर साहब का शुभागमन हुआ। साथ में एक कम्पाउण्डर तथा डॉक्टर साहब का एक बालक भी आता था। बालक की उमर १० वर्ष के लगभग होगी। बहुत ही सुन्दर था वह।

जहाँ बाईजी लेटी थीं, उसी के सामने बाईजी तथा हम लोगों के लिये भोजन बनता था। पहले ही दिन बालक की दृष्टि सामने भोजन के ऊपर गई। उसदिन भोजन में पापड़ तैयार किये गये थे। बालक ने ललिता बाई से कहा- 'यह क्या है?' ललिता ने बालक को पापड़ दे दिया। वह लेकर खाने लगा। ललिता ने एक पूड़ी भी दे दी। उसने बड़ी प्रसन्नता से उन दोनों वस्तुओं को खाया। उसे न जाने उनमें क्यों आनन्द आया? वह प्रतिदिन डॉक्टर साहब के साथ आता और पूड़ी तथा पापड़ खाता। बाईजी के साथ उसकी अत्यन्त प्रीति हो गई। आते ही साथ कहने लगे- 'पूड़ी-पापड़ मँगाओं।' अस्तु,

सोलहवें दिन डॉक्टर साहब ने बाईजी से कहा कि आपकी आँख अच्छी हो गयी। कल हम चश्मा और एक शीशी में दवा देंगे। अब आप जहाँ जाना चाहें सानन्द जा सकती हैं। यह कह कर डॉक्टर साहब चले गये। जो लोग बाईजी को देखने के लिए आते थे वे बोले 'बाईजी! डॉक्टर साहब की एक बार की फीस १६ रु. है, अतः ३२ बार के ५१२ रु. होंगे, जो आपको देना होंगे, अन्यथा वे अदालत द्वारा वसूल कर लेवेंगे।' बाईजी बोलीं- 'यह तो तब होगा जब हम न देवेंगे।'

उन्होंने गवदू पंसारी से, जो कि बाईजी के भाई लगते थे, कहा कि ५१२ रु. दूकान से भेज दो। उन्होंने ५१२ रु. भेज दिये। फिर बाजार से ४० रु. का मेवा फल आदि मँगाया और डॉक्टर साहब के आने के पहले ही सबको थालियों में सजाकर रख दिया। दूसरे दिन प्रातः काल डॉक्टर साहब ने आकर आँख में दवा डाली और चश्मा देते हुए कहा-'अब तुम आज ही चली जा सकती हो।' जब बाईजी ने नकद रुपयों और मेवा आदि से सजी हुई थालियों की ओर संकेत किया तब उन्होंने विस्मय के साथ पूछा- 'यह सब किसलिए?' बाईजी ने नम्रता के साथ कहा- 'मैं आपके सदृश महापुरुष का क्या आदर कर सकती हूँ? पर यह तुच्छ भेंट आपको समर्पित करती हूँ। आप इसे स्वीकार करेंगे। आपने मुझे आँख दी, जिससे मेरे सम्पूर्ण कार्य निर्विघ्न समाप्त हो सकेंगे। नेत्रों के बिना न तो मैं पठन-पाठन ही कर सकती थी और न इष्ट देव का दर्शन ही। यह आपकी अनुकम्पा का ही परिणाम है कि मैं निरोग हो सकी। यदि आप जैसे महोपकारी महाशय का निमित्त न मिलता तो मैं आजन्म नेत्र विहीन रहती, क्योंकि मैंने नियम कर लिया था कि अब कहीं नहीं भटकना और क्षेत्रपाल में ही रहकर श्री अभिनन्दन स्वामी के स्मरण द्वारा शेष आयु को पूर्ण करना। परन्तु आपके निमित्त से मैं पुनः धर्मध्यान के योग्य बन सकी। इसके लिए आपको जितना धन्यवाद दिया जावे उतना ही अल्प है। आप जैसे दयालु जीव विरले ही होते हैं। मैं आपको यही आशीर्वाद देती हूँ कि आपके परिणाम इसी प्रकार निर्मल और दयालु रहें जिससे संसार का उपकार हो। हमारे शास्त्र में वैद्य के लक्षण में एक लक्षण यह भी कहा है कि 'पीयूषपाणि' अर्थात् जिसके हाथ का स्पर्श अमृत का कार्य करे। वह लक्षण आज मैंने प्रत्यक्ष देख लिया, क्योंकि आपके हाथ के स्पर्श से ही मेरा नेत्र देखने में समर्थ हो गया। मैं आपको क्या दे सकती हूँ?'

इतना कहकर बाईजी की आँखों में हर्ष के अश्रु छलक पड़े और कण्ठ अवरुद्ध हो गया। डॉक्टर साहब बाईजी की कथा श्रवण कर बोले 'बाईजी! आपके पास जो कुछ है, मैं सुन चुका हूँ। यदि ये ५०० रु. मैं ले जाऊँ तो तुम्हारे मूलधन में ५०० रु. कम हो जावेंगे और ५ रु. मासिक आपकी आय में न्यून हो जावेंगे। इसके फलस्वरूप आपके मासिक व्यय में त्रुटि होने लगेगी। हमारा तो डाक्टरी का पेशा है, एक धनाढ्य से हम एक दिन में ५०० रु. ले लेते हैं, अतः तुम व्यर्थ की चिन्ता मत करो। किसी के कहने से तुम्हें भय हो गया है, पर भय की बात नहीं। हम तुम्हारे धार्मिक नियमों से बहुत खुश हैं। और यह जो मेवा फलादि रखे हैं, इनमें से तुम्हारे आशीर्वाद रूप कुछ फल लिये लेता हूँ, शेष आपकी जो इच्छा हो सो करना तथा ११ रु. कम्पाउण्डर को दिये देते हैं। अब आप किसी को कुछ नहीं देना। अच्छा, अब हम जाते हैं। हाँ, यह बच्चा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आप लोगों से बहुत हिल गया है। तुम लोगों की खाने की प्रक्रिया बहुत ही निर्मल है। अल्प व्यय में ही उत्तमोत्तम भोजन आपको मिल जाता है। हमारा बच्चा तो आपके पूड़ी-पापड़ से इतना खुश है कि प्रतिदिन खानसामा को डाँटता रहता है कि तू बाईजी के यहाँ जैसा स्वादिष्ट भोजन नहीं बनाता। हमारे भोजन में ऊपर की सफाई है परन्तु अभ्यन्तर कोई स्वच्छता नहीं। सबसे बड़ा तो यह अपराध है कि हमारे भोजन में कई जीव मारे जाते हैं तथा जब मांस पकाया जाता है तब उसकी गन्ध आती है। परन्तु हम लोग वहाँ जाते नहीं, अतः पता नहीं लगता। तुम्हारे यहाँ जो दूध खाने की पद्धति है वह अतिउत्तम है। हम लोग मदिरापान करते हैं, जो कि हमारी निरी मूर्खता है। तुम्हारे यहाँ दो आना के दूध में जो स्वादिष्टता और पुष्टता प्राप्त हो जाती हैं वह हमें २० रु. का मदिरापान करने पर भी नहीं प्राप्त हो पाती। परन्तु क्या किया जावे? हम लोगों का देश शीत-प्रधान है, अतः वरंडी पीने की आदत हम लोगों को हो गई। जो संस्कार आजन्म से पड़े हुए हैं उनका दूर होना दुर्लभ है। अस्तु आपकी चर्या देख मैं बहुत प्रसन्न हूँ। आप एक दिन में तीन बार परमात्मा की आराधना करती हैं। इतना ही नहीं भोजन की प्रक्रिया भी आपकी निर्मल है, परन्तु एक त्रुटि हमें देखने में आई वह यह कि जिस कपड़े से आपका पानी छाना जाता है वह स्वच्छ नहीं रहता तथा भोजन बनाने वाली के वस्त्र प्रायः स्वच्छ नहीं रहते और न भोजन का स्थान रसोई बनाने के स्थान से जुदा रहता है।' बाईजी ने कहा-'मैं आपके द्वारा दिखलाई हुई त्रुटि को दूर करने का प्रयत्न करूँगी। मैं आपके व्यवहार से बहुत ही प्रसन्न हूँ। आप मेरे पिता हैं, अतः एक बात मेरी भी स्वीकार करेंगे।' डॉक्टर साहब ने कहा- 'कहो, हम उसे अवश्य पालन करेंगे।' बाईजी बोली- 'मैं और कुछ नहीं चाहती। केवल यह भिक्षा माँगती हूँ कि रविवार आपके यहाँ परमात्मा की उपासना का दिन माना गया है, अतः उस दिन आप न तो किसी जीव को मारें, न खाने के वास्ते खानसामा से मरवावें और न खानेवाले की अनुमोदना करें...। आशा है मेरी प्रार्थना आप स्वीकृत करेंगे।' डॉक्टर साहब ने बड़ी प्रसन्नता से कहा-हमें तुम्हारी बात मान्य है। न हम खावेंगे, न मेम साहब को खाने देवेंगे और यह बालक तो पहले से ही तुम्हारा हो रहा है। इसे भी हम इस नियम का पालन करावेंगे। आप निश्चिन्त रहिये। मैं आपको अपनी माता के समान मानता हूँ। अच्छा, अब फिर कभी आपके दर्शन करूँगा।

इतना कहकर डॉक्टर साहब चले गये। हम लोग आधा घंटा तक डॉक्टर साहब के गुण-गान करते रहे। तथा अन्त में पुण्य के गुण-गाने लगे कि अनायास ही बाईजी के नेत्र खुलने का अवसर आ गया। किसी कवि ने ठीक ही तो कहा है-

'वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये महार्णवे पर्वतमस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा रक्षन्ति पुण्यनि पुराकृतानि॥'

कहने का तात्पर्य यह है कि पुण्य के सद्भाव में, जिनकी सम्भावना नहीं, वे कार्य भी आनायास हो जाते हैं, अतः जिन जीवों को सुख की कामना है उन्हें पुण्य-कार्यों में सदा उपयोग लगाना चाहिए।

मेरी जीवन गाथा (भाग १/पृ.१४२-१४८)

से साभार

अपर्याप्त दशा

तत्त्वदृष्टि वाले व्यक्ति संसार के प्रत्येक पदार्थ में, घटना में, तत्त्व का ही दर्शन किया करते हैं। यूँ कहो उसमें से तत्त्व को खोज लिया करते हैं। इसलिए कहा गया है "कि सृष्टि नहीं दृष्टि बदलो, जीवन बदल जावेगा।"

विहार करते हुए नरसिंहपुर की ओर जा रहे थे, रास्ता बहुत खराब था। आचार्य गुरुदेव से कहा- ऐसे रास्ते पर समय बहुत लगता है एवं ऐसी सड़क पर पैर भी छिल जाते हैं खराब हो जाते हैं। आचार्य महाराज हँसकर कहते हैं- पैर कम दिमाग ज्यादा खराब होता है, यह खराब सड़क अपर्याप्त दशा जैसी है। जिस प्रकार अपर्याप्त दशा में मिश्रकाय योग रहता है, उसमें मिश्र वर्गणायें आती हैं, उसी प्रकार इस रास्ते पर चलने से अलग प्रकार का अनुभव हो रहा है। थोडा रुककर बोले- हाँ अपूर्णता का नाम ही अपर्याप्त दशा है वह यही है, जिसे पार करना है। (28.01.2002 नरसिंहपुर)

मुनि श्री कुन्थुसागरकृत 'अनुभूत रास्ता' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिल्पी चागद वम्भदेव

पं० कुन्दनलाल जैन

भगवान् बाहुबलि तीर्थंकर नहीं थे, वे तो चौबीस कामदेवों में से प्रथम कामदेव थे अतः सर्व सुन्दर थे इसीलिए कन्नड़ भाषा में इनको गोम्मटस्वामी कहा है क्योंकि कन्नड़ में गोम्मट का अर्थ सर्वाधिक सुन्दर होता है, अस्तु। परन्तु श्रद्धालु भक्तजनों ने उनके त्याग, तपस्या एवं साधना को देखकर उन्हें भगवान्-सदृश ही मान लिया और वे भगवान् बाहुबलि नाम से विख्यात हो गए।

भगवान् बाहुबलि का अपौरुषेय एवं महामानवीय बलिष्ठ व्यक्तित्व विभिन्न कवियों, कलाकारों एवं सरस्वती-पुत्रों को मूर्तरूप प्रदान करने के लिए बरबस प्रेरित करता रहा। तीर्थंकर भगवान् आदिनाथ के समय से ही वे चर्चा और विवेचना के केन्द्र बने रहे। संस्कृत के आचार्य जिनसेन, अपभ्रंश के श्रेष्ठ कवि पुष्पदन्त प्रभृति, उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत के विभिन्न भाषाओं के श्रेष्ठ कवियों ने अपनी-अपनी कृतियों में उनका चरित्र-चित्रण बड़े ही कलापूर्ण एवं अनूठे ढंग से किया है।

भगवान् बाहुबलि का चरित्र श्रद्धालुओं को युगों-युगों से आकर्षित करता आ रहा है। सभी लोग पठन-पाठन, अर्चा, स्तुति, पूजा, ग्रन्थ-रचना मूर्ति-निर्माण आदि के रूप में उनके प्रति श्रद्धा-सुमन समर्पित करते आ रहे हैं, जो आज तक अमर और विख्यात हैं पर श्रवणबेलगोल में स्थित भगवान् बाहुबलि की प्रतिमा जो १३ मार्च, ९८१ में तत्कालीन गंगनरेश राचमल्ल के महामात्य एवं प्रधान सेनापति श्री चामुण्डराय ने निर्मित कराई थी वह आज भारतीय इतिहास और पुरातत्व की ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व की विख्यात श्रेष्ठतम कलाकृति है।

भगवान् बाहुबलि की इस श्रेष्ठतम कलाकृति के प्रमुख शिल्पी (तक्षक) त्यागद ब्रह्मदेव थे, जिन्हें कन्नड़ में चागद शब्द से संबोधित किया जाता है। उन्होंने बाहुबलि को साक्षात् भगवान् का रूप प्रदान कर भारतीय पुरातत्व को ही नहीं अपितु संसार के समस्त पुरातत्ववेत्ताओं को ऐसा सर्व सुन्दर कला-वैभव प्रदान किया है। जब तक यह मूर्ति विद्यमान रहेगी तब तक उस श्रेष्ठ कलासाधक महान् शिल्पी चागद को कोई भी नहीं भूल सकेगा और उसकी यशोगाथा गाते हुए उसकी कला की सराहना करते रहेंगे।

भगवान् बाहुबलि की मूर्ति का निर्माण करानेवाले चामुण्डराय राज-पुरुष, विख्यात विद्वान् और प्राकृत कवि थे। उन्हें तो सभी लोग जानते हैं, आज इतिहास में वे पूर्णतया विख्यात हैं। पर उस तपस्वी साधक, श्रेष्ठ शिल्पी, उच्च कलाकार चागद को बहुत कम लोग जानते हैं जिसकी अमर साधना और मूक तपस्या ने विराट्-स्वरूप को उत्कीर्णकर इतिहास और पुरातत्व को एक अनूठी, अमर पुण्य विभूति प्रदान की। इससे चामुण्डराय का यश भी चिरस्थायी हो गया है।

शिल्पी चागद कोई पढ़ा-लिखा प्रसिद्ध पुरुष नहीं था। उसके हाथ में कला थी, उसके छैनी-हथोड़े को आशीष और वरदान प्राप्त था। उसके हृदय में उसकी माँ ने भगवद्भक्ति उत्पन्न की थी और दिया था त्याग एवं तपस्या का उपदेश जिसके बल पर वह अक्षुण्ण अनुपम स्वरूप उत्कीर्ण कर सका और इतिहास-पुरुष बन गया।

भगवान् बाहुबलि की मूर्ति के निर्माण के बाद चागद को जो यश और सम्मान मिला उसकी गौरव-गाथा दक्षिण के जैन मंदिर आज तक गाते हैं। उसके उत्तराधिकारी शिल्पियों ने उसे सम्मान देने के लिए जिनालयों का निर्माण करते समय अनेक जिनालयों में घोड़े पर बैठे हुए चागद शिल्पी की मूर्ति भी उत्कीर्ण की। उनके बाएँ हाथ में चाबुक है जो इस बात का प्रतीक है कि धर्म-विरोधियों को उचित दण्ड-विधान किया जावे तथा दाएँ हाथ में श्रीफल जो इस बात का प्रतीक है कि प्रभु-कृपा सदा बनी रहे एवं पावों में खड़ाऊ उत्कीर्ण है जो जिनालय की पवित्रता की प्रतीक है।

बाहुबलि की श्रवणबेलगोल-स्थित इस विराट् कलाकृति के निर्माण के लिए इसी चागद शिल्पी को चामुण्डराय ने आमंत्रित किया और अपनी माता की इच्छा उसके समक्ष प्रकट की। चागद उस विशालकाय विंध्यगिरि के प्रस्तरखण्ड को देखकर विस्मय विमुग्ध हो गया जिस पर उसे अपनी छैनी-हथोड़े की कला प्रदर्शित करनी थी। उसे अपनी शिल्पकला पर अभिमान था, पर इतने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशाल कार्य के लिए वह क्या कर सकेगा! उसकी लोभ-कषाय ने उसके अन्तस्तल को झकझोर दिया। उसने प्रधान अमात्य से अपने पारिश्रमिक के रूप में उतनी ही स्वर्ण-राशि की याचना की जितना प्रस्तरखण्ड वह विन्ध्यगिरि से छीलेगा।

भगवान् बाहुबलि के भक्त चामुण्डराय ने शिल्पी चागद की यह शर्त सहर्ष स्वीकार ली और मूर्ति का निर्माण प्रारम्भ करवा दिया। संध्या-काल में तराजू के एक पलड़े पर शिल्पी चागद के विकृत शिलाखण्ड थे और दूसरे पलड़े पर भगवद्भक्त एवं मातृ-सेवक चामुण्डराय की दमकती हुई स्वर्ण-राशि। चामुण्डराय ने शिल्पी को बड़ी श्रद्धापूर्वक वह स्वर्ण-राशि समर्पित की, वे कलाकार के मर्म को समझते थे। तक्षक चागद आज अपनी कला का मूल्य इतनी विशाल स्वर्ण-राशि के रूप में पाकर हर्ष से फूला नहीं समा रहा था, खुशी के मारे उसे घर पहुँचने में हुए विलम्ब का आभास ही न हुआ। घर पहुँचकर कलाकार जैसे ही अपनी कला के मूल्य को सहेजकर धरने लगा कि वह राशि उसके हाथ से छूट नहीं रही थी और न उसके हस्त उस स्वर्ण से अलग हो रहे थे, दोनों एक-दूसरे से चिपके हुए थे।

भगवान् बाहुबलि की प्रतिमा का प्रधान शिल्पी असमंजस में था कि यह सब क्या हो रहा है? वह मन ही मन व्याकुल हो उठा, उसका हृदय इस हर्ष और उल्लास की वेला में खेद-खिन्न और दु:खी हो गया, तभी शिल्पी की माँ पधारी और कलाकार पुत्र की दुर्दशा देख बड़ी व्यथित हुई। लोभी शिल्पी ने अश्रु बिखेरते हुए अपनी राम कहानी माँ को सुना दी, माँ ने अपने कलाकार पुत्र को धीरज बँधाया और समझाया हे वत्स! क्या कला स्वर्ण के तुच्छ टुकड़ों में बिका करती है? तुममें यह दुष्प्रवृत्ति कहाँ से जन्मी? कला तो आराधना और अर्चना की वस्तु है, तुमने तो इसे बेचकर कलंकित कर दिया है। उस चामुण्डराय को तो देख जो मातृसेवा और प्रभु-भक्ति के वशीभूत हो तुझे इतना सब कुछ निर्लोभ-भाव से सहर्ष दे रहा है। तू अपनी श्रेष्ठतम कला के पीछे इन तुच्छ स्वर्ण-खण्डों का लोभ त्याग और प्रभु को प्रणामकर इस स्वर्ण-राशि को वापिस कर आ तथा अपना शिल्प-वैभव निष्काम भाव से प्रभु बाहुबलि के चरणों में समर्पित कर दे।

शिल्पी चागद वम्भदेव को अपनी मातुश्री का उपदेश भा गया, उसके भाव बदले, लोभ कषाय का उसने दहन किया, माता के उपदेश और प्रभुभक्ति ने उसकी कायाकल्प कर दी। चागद वम्भदेव ने उसी समय प्रतिज्ञा की कि इस मूर्ति का निर्माण नि:स्वार्थ और सेवाभाव से करूँगा, कोई पारिश्रमिक नहीं लूँगा और जब तक प्रतिमा का निर्माण नहीं हो जाता एकाशन व्रत धारण करूँगा। अंतरंग-विशुद्धि ने तथा लोभ-निवृत्ति ने उसके हाथों से चिपका सोना छुड़ा दिया। वह तत्काल भागा-भागा गया और प्रधानामात्य के चरणों में जा गिरा। सारी स्वर्ण-राशि लौटाते हुए बिलख-बिलख कर रोता हुआ बोला- हे प्रभु! मेरी रक्षा करो, मेरी कला का मोल-भाव मत करो और मुझे बाहुबलि की प्रतिमा का निर्माण पूर्णतया निर्विकार भाव से करने दें। अगले दिन से शिल्पी भगवान् बाहुबलि की प्रतिमा का निर्माण पूर्णतया निर्विकार भाव, बड़ी श्रद्धा-निष्ठा एवं संयमपूर्वक करने लगा। त्यागमूर्ति तक्षक चागद की ही १२ वर्ष की सतत तपस्या और साधना का पुण्य-फल है कि ऐसी अलौकिक एवं श्रेष्ठ प्रतिमा का निर्माण हो सका जो आज हजार वर्ष बाद भी संसार के भक्तजनों की श्रद्धा और आस्था का केन्द्र है तथा विश्व इतिहास और पुरातत्व की बहुमूल्य धरोहर बन गई है।

प्रधान अमात्य चामुण्डराय के अन्तस्तल में भक्त-साधक शिल्पी चागद वम्भदेव की श्रद्धा और निष्ठा के प्रति अतीव रागात्मक सद्भाव उत्पन्न हुआ अत: उन्होंने भगवान् बाहुबलि के चिरस्थायीत्व की भाँति साधक शिल्पी की भक्ति को भी स्थायीत्व देने के लिए प्रतिमा के पास ही छह फुट ऊँचा चागदस्तम्भ का निर्माण कराया जो आज भी उनकी यशोगाथा गा रहा है।

इस स्तंभ की विशेषता है कि यह अधर में विद्यमान है, इसके नीचे से एक रूमाल जैसा पतला कपड़ा निकल जाता है।

अमर है वह शिल्पी चागद वम्भदेव जिसने भारत को नहीं सम्पूर्ण विश्व को एक अमूल्य धरोहर दी है।

'जैन इतिहास के प्रेरक व्यक्तित्व'
(भाग १) से साभार

मैं जिसके हाथ में एक फूल दे के आया था।
उसी के हाथ का पत्थर मेरी तलाश में है॥
कृष्णबिहारी नूर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जागरण-संदेशक की मूक चीखें

डॉ० ज्योति जैन

जी हाँ! मुर्गे की बाँग से ही पौ फटने अर्थात् सुबह होने का संदेश आता था। मुर्गे की बाँग हमारी संस्कृति का एक हिस्सा है। बाल-कथाओं के पात्र के रूप में हो या बच्चों के अक्षरज्ञान की किताबों के रूप में, हमारे जीवन में मुर्गा-मुर्गी के साथ पशु-पक्षियों की उपस्थिति सदैव रही है।

व्यक्ति के जीवन का आधार घर, परिवार समाज या देश के साथ ही प्रकृति की हर वह चीज है जिससे हमारा संबंध है। लेकिन क्या हम प्रकृति के साथ संबंधों का संतुलन कायम रख पाये हैं? नहीं आज मनुष्य के बढ़ते कदम, विकास के नये मापदण्ड, भौतिक सुख सुविधाओं की लासला, चटोरापन और शून्य होती संवेदनाओं से नैतिकता तो समाप्त हो ही रही है दया एवं करूणा जैसे गुणों का अभाव भी होता जा रहा है। अपनी लोभी-वृत्ति से स्वार्थ से वशीभूत मनुष्य प्रकृति से छेड़-छाड़ कर उसे विनाश के मार्ग पर ला रहा है। आज अनेक जीवों का अस्तित्व खतरे में है। ध्यान रहे यदि वह प्रकृति से छेड़छाड़ करेगा तो प्रकृति उसे भी नहीं छोड़ेगी। प्रकृति, मनुष्य, जीव-जन्तु सभी का आपस में संबंध है, एक के संकट से दूसरे भी संकटग्रस्त हो जायेंगे।

हाल ही के समाचारों के अनुसार बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में 6 लाख मुर्गियों को बर्डफ्लू के कारण मौत के घाट उतार दिया गया है तथा लाखों मुर्गे-मुर्गियों को मौत देने की तैयारी चल रही है। इससे पहले भी 2003 में सूरत में बर्डफ्लू की आशंका से एक लाख मुर्गे-मुर्गियों को मारा गया था। महाराष्ट्र के नंदुरवार जिले के नवापुर तालुका में जब चालीस हजार मुर्गियाँ मरी पायी गयी तब बर्डफ्लू के कारण तीन लाख मुर्गियाँ और छः लाख अंडे नष्ट किये गये। अन्य देशों में भी इसी तरह मुर्गे मुर्गियों को मारा जाता रहा है। इतना ही नहीं नवम्बर 1999 में श्रीलंका में 6 लाख मुर्गों को गैस चेम्बर में झोंक दिया गया कारण उनकी कीमत में आयी गिरावट। 1987 में लगभग दो करोड़ मेढ़कों को चीरफाड़ में इस्तेमाल किया गया। बड़े पैमाने पर मछलियों के शिकार से मछलियों की चौतीस प्रतिशत प्रजातियाँ नष्ट हो गयी हैं और अनेक नष्ट होने के कगार पर हैं। ये मात्र कुछ ही उदाहरण हैं बेजुबानों पर जिस तरह मानव अत्याचार कर रहा है उसकी सभी सीमायें पार हो रही हैं। मनुष्य प्रकृति के साथ महज उपभोग का संबंध ही बना पा रहा है। जरा सी आशंका हुई नहीं कि उसे नष्ट करने पर तुल जाता है। एक-एक करके पशु-पक्षियों की सैकड़ों प्रजातियाँ समाप्त हो गयी हैं और अनेक विनाश की कगार पर हैं। इसी तरह क्रम चलता रहा तो मनुष्य जाति को भी अपना अस्तित्व बनाये रखना कितना मुश्किल हो जायेगा इस पर चिंतन करना आज के दौर में सबसे अधिक आवश्यक है।

जंगली जीवों की अपनी भोजन श्रृंखला है एक जीव दूसरे जीव को आहार बनाता है। जीव जन्तु खाने वाले यही तर्क देते हैं कि इन्हें मरना ही था, हमने मार दिया तो क्या? पर मनुष्यों की खाद्य श्रृंखला अलग है जैसे बड़ी मछली छोटी को खा जाती है पर एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को नहीं खा सकता। मनुष्यों का भोजन तो शाकाहार ही है। आज की बदलती खान-पान शैली में जिस तरह से मांसाहार को शामिल कर लिया गया है उसी तरह से पशु-पक्षियों की बीमारियों का खतरा भी तेजी से मंडराने लगा है। मेडकाऊ, बर्डफ्लू, सॉस, एड्स आदि रोगों के उदाहरण सामने हैं। इस समय बर्डफ्लू का खतरा पूरे विश्व में मंड़रा रहा है। इतना सब होते हुए भी बटर चिकन, चिकन सूप, तंदूरी चिकन, लाजबाव चिकन, कडाही चिकन, तवा चिकन, और न जाने कौन-कौन से चिकन खाने वालों के ऊपर असर दिखाई नहीं पड़ रहा है। असर तो पड़ रहा है उन बेजुबान पशु-पक्षियों पर, जिनको संक्रमण का खतरा होते ही मौत के घाट उतार दिया जाता है। इन बेजुबान पशु-पक्षी के लिये कौन-सी अदालत है जहाँ इन्हें न्याय मिल सके?

मानव सभ्यता के विकास क्रम में जैसे-जैसे हम प्रगति-पथ पर बढ़ रहे हैं, अपने विकसित किये संसार के विनाश का मार्ग भी बनाते जा रहे हैं। दुनियाँ में जैसे मुक्त व्यापार तेजी से फैल रहा है उसी तरह महामारियाँ भी विभिन्न रूपों में फैल रही हैं। बीमारियों के प्रचार ने अन्तर्राष्ट्रीय खौफ पैदा कर दिया है। बहुराष्ट्रीय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कम्पनियाँ भी नये-नये रोगों की दवा बनाकर मुनाफा ही मुनाफा कमा रही हैं। एक तथ्य यह है कि आज विभिन्न रोगों के वायरस जो आक्रमण कर रहे हैं ये कोई स्वाभाविक नहीं है वरन् प्रयोगशाला में तैयार हो रहे हैं। एक देश दूसरे देश को कब वायरस का शिकार बना दे, पता ही नहीं। विकसित देश जैविक हथियार के रूप में इस तरह के वायरसों को खूब प्रयोग कर रहे हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि बर्डफ्लू वायरस भी प्रयोगशाला के जैव विज्ञानियों की देन है। इस बीमारी को लेकर अनेक दवाईयाँ, टीका आदि बनाने का प्रयास जारी है। पर कोई ठोस नतीजा नहीं निकल पाया है क्योंकि बर्डफ्लू का विषाणु लगातार बदल रहा है और वैज्ञानिकों को डर है कि कहीं यह एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में संक्रमण की विनाशकारी क्षमता न विकसित कर ले।

विश्व स्वास्थ्य संगठन स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों में बर्डफ्लू का खतरा सबसे अधिक मान रहा है। इसकी जड़ में एच 5 ए 1 नामक विषाणु का संक्रमण है। जिससे यह बीमारी फैलती है। पोल्ट्रीफार्म के संक्रमित मुर्गे-मुर्गियों में फैली इस बीमारी से लाखों जीवों को मौत के घाट उतारा जा चुका है और न जाने कहाँ इसका अन्त होगा। मुनाफा कमाने की होड़ में मनुष्य ने प्रकृति संबंधी नियमों का सदैव उल्लंघन किया है पानी के बढ़ते प्रदूषण से मानव क्या पशु-पक्षी भी संक्रमित हो रहे हैं। जहरीले रसायनों, कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग इन जीवजन्तु का विनाश कर रहे हैं। मुर्गे-मुर्गियों को कृत्रिम वातावरण में रखना, उनकी जैविक छेड़छाड़, बूचड़खानों की गंदगी, अव्यवस्था उन्हें रोगों से ग्रसित कर रही है। जब संक्रमण फैलता है तो उसे दबाया जाता है और जब वश में नहीं रहता तब लाखों निरीह जीवों को मार दिया जाता है। भारत में लगभग पैंतीस करोड़ रुपये वार्षिक का मुर्गीपालन कारोबार है। देश के पोल्ट्रीफार्मों में करीबन पचास करोड़ मुर्गे-मुर्गियाँ पलते हैं, घरों एवं अन्य जगहों की तो कोई गिनती ही नहीं है। लगभग तीस लाख लोग इस धंधे में लगे हैं, लगभग दो सौ करोड़ रुपये की आय तो उन ट्रक वालों को ही होती है जो मुर्गे एवं अंडों को इधर से उधर ले जाते हैं। इतने बड़े व्यवसाय में संक्रमण होने पर न केवल अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पड़ता है बल्कि लोग आर्थिक संकट से भी घिर जाते हैं साथ ही मूक जीवों का कितना घात होता है यदि कल्पना भी करो तो रोंगटे खड़े हो जायें।

विज्ञान की तमाम प्रगति के चलते विश्व के अनेक देशों में विशेषकर दक्षिणी पूर्वी एशिया में बर्डफ्लू की विभीषिका हम सब देख ही चुके हैं। इंसान यदि अपनी स्वार्थपरता छोड़, प्रकृति के नियमों का पालन करें और अपने शाकाहारी भोजन पर आ जाये तो इन जीव जन्तुओं को जीवन मिल सकता है और मुर्गे की बाँग मात्र पुस्तकों में ही नहीं पढ़ेंगे बल्कि वह सुनाई भी देगी।

शिक्षक आवास - 6
श्री कुन्दकुन्द जैन महाविद्यालय परिसर,
खतौली (उ.प्र.)

वीतरागता

धर्मसभा का आयोजन था। आचार्य महाराज का प्रवचन होने वाला था। सहसा भीड़ में हलचल हुई और एक वृद्धा मंच पर पहुँच गई। स्वयंसेवक दौड़े, उसे रोकना चाहा, पर इस बीच उसने प्रणाम निवेदित करके अपने कुछ स्वर्ण आभूषण उतारकर महाराज के चरणों में अर्पित कर दिए। सभी अवाक् देखते रह गए।

मालूम पड़ा कि वह वृद्धा माँ, जन्मना जैन नहीं है, पर कर्मणा जैन अवश्य है। उसने आज पहली बार आचार्य महाराज के दर्शन किए हैं और उनकी वीतरागता और त्याग तपस्या से अभिभूत होकर अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया है। उस क्षण उसका भक्ति-भाव देखकर लगा कि धर्म सभी का है। उसे हर कोई धारण कर सकता है। जो सच्ची दृष्टि से, सच्चा ज्ञान दे और सच्चा रास्ता बताए, वही सच्चा धर्म और वही सच्चा गुरु है।

मुक्तागिरि (1990)

मुनि श्री क्षमासागरकृत 'आत्मान्वेषी' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आखिर क्या हैं निमित्तशास्त्रों की सीमाएँ ?

डॉ० अनेकान्त जैन

वास्तुशास्त्र पर जिनभाषित के अक्टूबर, 05 अंक में बहुत संक्षिप्त व वैज्ञानिक आलेख पढ़ने को मिला। विचारक धन्नालाल जी को में साधुवाद देना चाहता हूँ। इस प्रकार के विमर्श होने चाहिए। मुझे इसी प्रसंग में स्मरण है जब महामहिम राष्ट्रपति डॉ० कलाम के शपथ ग्रहण की तैयारी हो रही थी। एन० डी० ए० सरकार के कुछ कैबिनेट स्तर के मंत्रियों ने उन्हें सलाह दी कि वे पंचांग देखकर शपथ का शुभमुर्हूत तय करवा लें। तब डॉ० कलाम ने कहा था कि जब तक पृथ्वी अपनी धुरी पर धूम रही है तब तक मेरे लिए सारे ही समय शुभ हैं। डॉ० कलाम का उत्तर एक जिम्मेदार भारत के प्रथम नागरिक तथा एक वैज्ञानिक होने के नाते भारतवर्ष के उस युग पर एक गहरी चोट था जिस युग में पढ़े लिखे अन्धविश्वासियों की एक पूरी जमात खड़ी हो गयी है।

मैं कभी-कभी विचार करता हूँ कि अध्यात्मरस में निमग्न जैनाचार्यों के पास में तमाम ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ होते हुये भी, अपने भीतर निमित्त शास्त्रों का ज्ञान, वास्तुशास्त्र, सामुद्रिकशास्त्र तथा ज्योतिषशास्त्र का प्रकाण्ड पाण्डित्य होते हुये भी आखिर उन्होंने इन विषयों को ज्यादा महत्त्व क्यों नहीं दिया? वो शायद इसलिए कि इसमें से एक भी 'सम्यग्ज्ञानं प्रमाणम्' की कोटि में नहीं आते।

यद्यपि तंत्र-मंत्र, वास्तु, ज्योतिष आदि विषय एक गम्भीर व उपयोगी विषय हैं किन्तु इनकी भी सीमाएँ हैं। और इन विषयों का प्रयोग करनेवाले क्षेत्रों की भी अपनी मर्यादायें हैं। कुछ निश्चित लोग, कुछ बड़े-बड़े धार्मिक कार्यों के सम्पादन के लिए द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की शुद्धि का विचार कर लेते हैं उसका अपना अलग महत्त्व है। किन्तु ज्ञान विज्ञान के इस सुलझे आधुनिक शिक्षित युग में पुरानी परम्पराओं को सार्थक सिद्ध करने की कोशिश में वास्तु, ज्योतिष, तन्त्रमन्त्र के नाम पर तमाम गृहीत मिथ्यात्व की दकियानूसी मान्यताओं को नयी पीढ़ी को सौंपना कोई अच्छा कार्य नहीं है। और न ही शुभ संकेत।

मुझे आश्चर्य तब होता है जब लाखों की नयी कार खरीदकर भारतवर्ष का 'ए' क्लास ऑफीसर उस कार के पीछे टूटी चप्पल टाँग लेता है। एक इन्जीनियरिंग या मेडिकल का विद्यार्थी परीक्षा में सम्मिलित होने से पूर्व अपने गले में पड़ा ताबीज चूमता है तथा जेब में 'श्री यन्त्र' रखकर लाता है। पिछले दिनों अपने विश्वविद्यालय में वार्षिक परीक्षाओं के दौरान जब मैंने नकल के शक में एक विद्यार्थी की तालाशी ली तो उसकी जेब से एक चौकोर आकार का ताँबे का टुकड़ा मिला उस पर खण्ड बने थे तथा कुछ नम्बर खुदे थे और ऊपर लिखा था 'परीक्षोत्तीर्णयन्त्रम्'। सभी अध्यापक इस विमर्श में पड़ गये कि इसे अवैध सामग्री माना जाये अथवा नहीं। बहुत पूछताछ करने पर उसने बताया कि उसने यह यन्त्र एक पण्डित से दो सौ रुपये में खरीदा है। एक स्नातकोत्तर स्तर का विद्यार्थी जो भारतवर्ष की दिल्ली जैसी राजधानी में रहता है और पढ़ता है और मानता है कि मेरा भाग्य मुट्ठी में नहीं है बल्कि इस यन्त्र में है।

मुझे यहाँ तक तो यह बात अच्छी लगती है कि मंदिर में प्रतिष्ठा आदि कार्यों के लिए पंचांग से शुभ तिथि व मुहूर्त का चयन किया जाता है, किन्तु यह बात अखरती है कि इस देश का नवयुवक रोज घर से निकलकर स्कूटर या बाइक स्टार्ट करने से पहले मुहूर्त देखे। ग्रहों, सितारों, राशियों का फल अखबारों में सुबह पढ़कर ही अपना टाइम टेबल बनाये। वास्तुशास्त्र जैसा गम्भीर व जटिल विषय भी आज तमाम रूढ़ियों और अंधविश्वासों से घिर कर दूषित हो रहा है। लोगों के इस अंधविश्वास का फायदा उठाकर कुछ पल्लवग्राही वास्तुशास्त्री मोटी रकम भी कमाते हैं।

आज वास्तुशास्त्र का आसरा लेकर नव धनाढ्य वर्ग अपने भवनों, दूकानों आदि में परिवर्तन कर रहे हैं। करोड़ों की चीजें मिटाकर अरबों खर्च किये जा रहे हैं। कहीं यदि अर्थाभाव में या परिस्थिति वश परिवर्तन संभव नहीं है तो वास्तु पूजन और विधानों द्वारा उसकी शान्ति होती है। एक वास्तु पुरुष की कल्पना होती है, उसकी पूजन होती है। ये शौक आधुनिक भारत में उभरते उस नवधनाढ्य वर्ग के हैं जो अपने इन अनैतिक कमाई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के राजमहलीय शौकों से आम वर्ग को आतंकित कर रहा हैं। छोटे-छोटे बच्चे तक यह सोचने लग गये हैं कि मैं कक्षा में इसलिए पिछड़ा हूँ अथवा मेरा मन पढ़ाई में इसलिए नहीं लगता क्योंकि मेरे घर का वास्तु ठीक नहीं है।

टेलीवीजन चैनल इन अंधविश्वासों को आधुनिकता की शक्ल दे रहे हैं। इन रूढ़ियों और अंधविश्वासों की एक इण्डस्ट्री खड़ी हो गयी है। मुझे बड़ा आश्चर्य होता है जब वीतरागता की आराधना करने वाले जैन घरों में भी फेंगशुई की धनवर्षा करवाने वाली घडियाँ लटकती हैं, लाफिंग बुद्धा की बेडौल मूर्तियाँ रखीं होती हैं, एक डरावने स्वप्न की तरह दिखने वाला भयानक मेढ़क मुँह बा कर शो केस में ऐसे रखा रहता है मानो हमारे खोखलेपन का मज़ाक उड़ा रहा हो।

मेरा प्रश्न है- क्या हम भी अपने शुभाशुभ भाव के फलस्वरूप पुण्य-पाप की करनी और भुगतनी को भूल बैठे हैं? है कोई ऐसा तंत्र, मंत्र, वास्तु, ज्योतिष, गण्डा-ताबीज जो उदीयमान पापकर्मों की प्रकृति बदल दे। या फिर पुण्य छीन ले। वीतराग सर्वज्ञों के जो ज्ञान में तीनों कालों में तीनों लोकों का स्वरूप आया उसमें परिवर्तन कर दे? इन निमित्त-नैमित्तिक ज्ञान विज्ञानों का अपना अलग महत्त्व होगा। किन्तु इन्हें उतना ही महत्त्व दिया जाना चाहिए जितनी हद तक इनकी प्रामाणिकता है। जीवन के सुख दुःख तथा विचित्र स्वरूप के सत्य का ज्ञान इतना बहुआयामी है कि इसकी खोज में आज तक ये सभी विद्यायें किसी अन्तिम व प्रामाणिक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकीं हैं। हर भविष्यवाणी फलादेश अपने अपने कारणों के प्रति सदा एक से नहीं रहते, बदलते रहते हैं। अपवादों का भण्डार भी इतना है कोई भी घोषणा अंतिम रूप से नहीं हो सकती।

ज्योतिष शास्त्र के किसी अध्येता ने आज तक ऐसी भविष्यवाणी नहीं की कि लोग यह स्थान खाली कर दें क्योंकि इस दिन अथवा इस महिने यहाँ भूकम्प आयेगा या फिर सुनामी आयेगा और बर्बादी फैलायेगा। हाँ ये घटनायें होने के बाद हर अखबार में एक ज्योतिषी का लेख होता है जो ये समझाता है कि किस ग्रह की किस दशा के कारण यह हुआ? कहने का तात्पर्य भूतकाल का विश्लेषण ज्यादा होता है जो प्रत्यक्ष घटित हो चुका है अथवा वर्तमान में घटित हो रहा है। वास्तव में होगा क्या? यह तो अतीन्द्रिय ज्ञान का ही विषय है।

सार यह है कि परम्पराओं की रक्षा के प्रयास में यह ध्यान रखना भी जरूरी है कि कैसी परम्पराओं को सुरक्षित रखना है या पुर्नजीवित करना है क्योंकि गृहीत मिथ्यात्व की परम्परा भी उतनी ही प्राचीन है जितनी सम्यक्त्व की।

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ
नई दिल्ली

'जिनभाषित' (हिन्दी मासिक) के सम्बन्ध में तथ्यविषयक घोषणा

प्रकाशन स्थान	: 1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी, आगरा - 282002 (उ.प्र.)
प्रकाशन अवधि	: मासिक
मुद्रक-प्रकाशक	: रतनलाल बैनाड़ा
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: 1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी, आगरा - 282 002 (उ.प्र.)
सम्पादक	: प्रो. रतनचन्द्र जैन
पता	: ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा, भोपाल - 462 039 (म.प्र.)
स्वामित्व	: सर्वोदय जैन विद्यापीठ, 1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी, आगरा - 282002 (उ.प्र.)

मैं, रतनलाल बैनाड़ा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपर्युक्त विवरण सत्य है।

रतनलाल बैनाड़ा, प्रकाशक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब तो जागो जैनियो !

सुनील जैन 'संचय'

मुद्दा- सिख समाज द्वारा दिन में शादी करने का एलान।

हाल ही में अखबारों में एक समाचार आया था, जिसका शीर्षक था 'रात में फेरों पर रोक लगी' समाचार का शीर्षक पढ़कर मैंने सोचा था यह जैन समाज का निर्णय होगा परंतु अफसोस जब समाचार के अंदर पढ़ा तो उसमें लिखा था 'सिख समुदाय में रात के वक्त शादी करने-कराने पर पूरी तरह बैन लग गया है। दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने साफ कर दिया है कि अगर सिख समुदाय का कोई भी व्यक्ति इस फरमान का उल्लंघन करेगा तो शादी रुकवाई भी जा सकती है, इसलिए बेहतर होगा कि लोग दिन में ही शादी रचाएँ।' यही नहीं समाचार में दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के महासचिव बलवीर सिंह विवेक बिहार के हवाले से लिखा था कि 'शादियाँ दिन में ही हों इस पर नजर रखने के लिए हर इलाके में टीम तैनात कर दी गई है। सभी गुरुद्वारों को फरमान जारी कर दिया गया है कि अगर कोई भी ग्रंथी रात के वक्त शादी कराने जाएगा तो उसे फौरन सस्पेंड कर दिया जाएगा। इससे पहले गुरुद्वारा बंगला साहिब के एक ग्रंथी को रात के वक्त शादी कराने के मामले में सस्पेंड किया जा चुका है। शादियों में सिर्फ शाकाहारी खाना परोसा जायेगा।' जैन समाज के लिए यह समाचार करारा तमाचा से कम नहीं है। क्या जैन समुदाय में इस प्रकार का हिम्मत पूर्ण फैसला लेने का हौसला है? यह समाचार पढ़कर लगा कि मानो सिख समुदाय के लोग जैन समुदाय से कह रहे हों कि जैनियों शास्त्रों में लिखा होना और उनका व्याख्यान कर देना मात्र ही कार्यकारी नहीं है, आचरण में लाये बिना सब बेकार है। सिख समाज सीना तानकर मानो यह कह रहा हो कि जैनियों तुम भी हमारे रास्ते पर चलो।

हमारी जबान पर होना तो यह चाहिए था कि जैन समाज की तरह अन्य समुदायों को भी दिन में शादी करना चाहिए। परंतु आज हम यह कहने के लिए मजबूर हैं कि देखो सिख समुदाय की तरह जैन समाज में भी दिन में शादियों का प्रावधान होना चाहिए। सोचें आखिर हम अपनी आदर्श संस्कृति, सभ्यता व व्यवहार तथा रहन-सहन में दिन-प्रतिदिन कमजोर क्यों होते जा रहे हैं। यूँ तो हमारी समाज में बड़े-बड़े धर्म के ठेकेदार बहुसंख्या में हैं, संस्थाओं की भी कमी नहीं है। पर सवाल तो यह है कि असल रूप में कितने लोग या कितनी संस्थायें जैन संस्कृति की रक्षा के लिए चिंतित हैं। पूजन की थालियों पर तो खूब लड़ाईयाँ समाज में हो रही हैं, लेकिन इस ओर किसी का ध्यान नहीं है। धर्म के तथाकथित ठेकेदारों को कम से कम अब तो जाग जाना चाहिए। आज हमारी जितनी भी संस्थाएँ हैं, उनका बस कार्य रह गया है एक-दो प्रस्तावों को पारित कर देना, उन्हें जैन पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित कर देना। उसके बाद वह प्रस्ताव फायलों की शोभा बढ़ाते हैं और अब तो प्रस्ताव भी पूर्वाग्रह से ग्रसित होते हैं। क्या कभी किसी संस्था या नेता ने सिख समुदाय जैसा प्रस्ताव पारित करने व अमल में लाने की हिम्मत दिखायी है? खैर! हमारे जैन समाज में ऐसी संस्था या संगठन ही कहाँ है जिसके फरमान को पूरी जैन समाज शिर-माथे ले। हाल ही में एक संस्था का राष्ट्रीय अधिवेशन था। मैं भी उसमें उपस्थित था। वहाँ उपस्थित एक सुप्रसिद्ध जैन विद्वान् ने दो प्रस्ताव कार्यकारिणी में रखे- 1.'जो जैनी जैनेतर समाज में शादी कर रहे हैं, उनको समाज के मंच से न तो सम्मानित किया जाय न ही ऐसे आयोजनों में सम्मिलित हों। 2. विवाह के निमंत्रण पत्र में 'भोजन की व्यवस्था दिन में भी है' रात्रि में अमुक समय तक है, इस प्रकार का न छापा जाय तथा दिन में ही शादी हो।' जब यह दो प्रस्ताव अधिकारियों ने सुने तो अधिकांश लोग नहीं चाहते थे कि इस प्रकार के प्रस्ताव पास हो। फिर विद्वान् महोदय ने जिस ढंग से अपनी बात रखी उसे देखते हुये हाँ कहना पड़ी। लेकिन यही बात जब खुले मंच से उक्त विद्वान् ने कहीं तो कुछ तथाकथित ठेकेदार मंच पर विरोध करने लगे और अंततः यह कहना पड़ा कि ये प्रस्ताव सुझाव के रूप में रखे गये हैं। अगले अधिवेशन में इन पर निर्णय लिया जाएगा। बताइये यह सब क्या उचित है?

अब समय आ गया है समाजहित में, धर्म की रक्षा और अपने परिवार की सुरक्षा के लिए कुछ कठोर कदम उठाने का। आखिर हम नींद से कब जागेंगे?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब भी देर नहीं हुयी है, सुबह का भूला यदि शाम को घर आ जाय तो उसे भूला नहीं कहते। हमें सिख समाज ने जो सबक दिया है, उस पर गौर से चिंतन करें और जैनियों को एक मंच से राष्ट्रीय स्तर पर रात्रि शादी निषेध का ऐलान करने में देरी नहीं करना चाहिए।

अमीर एवं समाज के प्रतिष्ठित श्रावकों को रात्रि शादियों का न केवल बहिष्कार करना है बल्कि रात में होने वाली शादियों को खुद भी रोकने हेतु कमर कसनी होगी। अगर कोई जैन बंधु मना करने के बाद भी रात्रि में शादी करे तो जबरदस्ती ऐसी शादी रोकी जाना चाहिए। वर्तमान समय में रात्रि भोजन गरीब में, अमीर की बारात में, ग्राम से शहर की बाराती में आम बात हो गयी है। इससे अन्य धर्मावलम्बी जैनों पर व्यंग, छींटाकशी तो करते ही हैं, हमारी जैनत्व की मूलभूत संस्कृति भी नष्ट हो रही है। हम हास्य के पात्र और पाप के भागीदार तो बन ही रहे हैं। अतः जरूरत अब दिन में विवाह करने की है, जिससे धर्म और संस्कृति की सुरक्षा हो सके।

दिन में शादी करने के अनेक फायदे होते हुये भी हम रात्रि शादी की ओर क्यों बढ़ रहे हैं? हमारी संस्कृति भी रात्रि शादी की पक्षधर नहीं रही है। रात्रि शादियों में भौड़े नृत्य, फिल्मी गीत-संगीत, युवा वर्ग का शराब पीकर नाचना, घोर हिंसक आतिशबाजी, बिजली की अंधाधुध सजावट आदि क्या जैनियों को शोभा देता है। जरा चिंतन करें, कहीं हम अपनी आदर्श संस्कृति को कंलकित नहीं कर रहे हैं?

सुखद है कि देश की राजधानी दिल्ली से जो फरमान सिख समाज ने दिया था, उससे सबक लेते हुए देश की राजधानी के जैन समुदाय ने एकजुटता का परिचय देते हुये दिन में शादियों का बिगुल फूंक दिया है, जिसमें हमारे पूज्य संतों की प्रमुख भूमिका है। 1 जनवरी, 2008 से दिल्ली जैन समाज ने एक आचार संहिता भी लागू कर दी है। जिसमें कहा गया है कि- विवाह समारोह दिन में आयोजित हों। अनावश्यक धन प्रदर्शन और तड़क-भड़क न हो। विवाह समारोह में सड़क पर नाच न हो। आतिशबाजी एवं शराब का प्रयोग नहीं होना चाहिए। जो व्यक्ति उल्लघंन करेगा, उसे समाज में बहुमान नहीं दिया जायेगा तथा जैन संस्था में पदाधिकारी नहीं बनाया जायेगा। निश्चित ही यह कदम बहुत ही प्रशंसनीय है। देश की राजधानी से यह कदम जैन समाज द्वारा उठाया गया है, तो निश्चित ही दूर तलक यह संदेश जायेगा। जब देश की राजधानी का जैन समुदाय ऐसा साहस भरा कदम उठा सकती है, तो प्रांतों की जैन समाज क्या प्रांतीय स्तर पर यह कदम नहीं उठा सकती? आशा है शीघ्र ही इस प्रेरणादायी निर्णय से प्रेरित होकर प्रत्येक प्रांत की जैन समाज रात्रि शादी निषेध की आचार संहिता लागू करेगी और एक दिन ऐसा होगा जब पूरे देश की जैन समाज दिन में शादी करने का आदर्श स्थापित कर एक नूतन इतिहास की रचना करेगा। अब देखने वाली बात यह होगी कि हमारे संत, नेता व संस्थायें इस अभियान में कहाँ तक अपना योगदान देते हैं।

नरवां जिला-सागर (म.प्र.)

आत्म-सूर्य

रात बहुत बीत गई। सभी लोगों के साथ इंतजार कर रहा हूँ कि वे सामायिक से बाहर आएँ और हमें उनकी सेवा का अवसर मिले। सोच रहा हूँ कितना अद्भुत है जैन मुनि का जीवन कि यदि वे आत्मस्थ हो जाते हैं तो स्वयं को पा लेते हैं और आत्म-ध्यान से बाहर आते हैं तो हम उन्हें पाकर अपने आत्मस्वरूप में लीन होने का मार्ग जान लेते हैं।

दीपक के धीमे-धीमे प्रकाश में उनके श्रीचरणों में बैठकर बहुत अपनापन महसूस कर रहा हूँ। मानो अपने को अपने अत्यन्त निकट पा गया हूँ। उनके श्रीचरणों की मृदुता मन को भिगो रही है। हम भले ही उनकी सेवा में तत्पर हैं, पर वे इस सब से बेभान अपने में खोये हैं। अद्भुत लग रहा है, इस तरह किसी को शरीर में रहकर भी शरीर के पार होते देखना।

वह रात देखते-देखते बीत गई। दूसरे दिन सूरज बहुत सौम्य और उजला लगा। आज मुझे लौट जाना है। लौटने से पहले जैसे ही उनके श्रीचरणों को छुआ और उनके चेहरे पर आयी मुस्कान को देखा, तो लगा मानो उन्होंने पूछा हो कि क्या सचमुच लौट पाओगे? क्या कहता? कुछ कहे बिना ही चुपचाप लौट आया और अनकहे ही मानो कह आया कि अब कभी, कहीं और, जा नहीं पाऊँगा। उनकी आत्मीयता ने मन को छू लिया है कि जैसे सुबह उगते सूरज ने द्वार खोलते ही अपनी प्रकाश रश्मियों से बाहर भीतर सब तरफ से हमें भिगो दिया हो। अपने इस आत्म-सूर्य को मेरा प्रणाम। (कुण्डलपुर 1976)

मुनि श्री क्षमासागरकृत 'आत्मान्वेषी' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कैंसर की जड़ मांसाहार

पाँच साल तक अध्ययन के बाद वर्ल्ड कैंसर रिसर्च फंड ने किया खुलासा। यह सामान्य सर्वे नहीं, सात हजार स्टडी रिपोर्ट्स के अध्ययन के बाद निकाला निष्कर्ष

वुमन भास्कर नेटवर्क जयपुर/इंदौर- यह बात सिद्ध हो चुकी है कि शाकाहारियों के मुकाबले मांस खानेवालों में कैंसर की आशंका अधिक होती है। यह तथ्य सामने आया है, दुनियाँ मे कैंसर पर हुए एक अध्ययन में। अध्ययन वर्ल्ड कैंसर रिसर्च फंड ने अमेरिकन इंस्टिट्यूट फॉर कैंसर रिसर्च के साथ मिलकर किया है। इसमें हजारों लोगों को शामिल किया गया और लगातार पाँच साल तक स्टडी चलती रही।

अध्ययन में कैंसर का मुख्य कारण जो सामने आया, वह था 'मांस'। यद्यपि इस तरह की कई रिपोर्ट्स और स्टडीज काफी समय से सामने आ रही थी कि मांस और कैंसर का गहरा नाता है, किंतु अब यह सिद्ध हो चुका है कि मांस खानेवालों में कैंसर होने के चांस कई गुना ज्यादा होते हैं, खासतौर पर लाल मांस खाने वालों में।

कैसे रहें स्वस्थ ?

वर्ल्ड कैंसर रिसर्च फंड ने कैंसर का खतरा कम करने के लिए कुछ टिप्स दी हैं- मांसाहार बिलकुल त्याग दें।

प्रोसेस्ड व लाल मांस कैंसर के लिए सबसे बड़ा खलनायक है, खासतौर पर बेकन, हैम, सासेजेस आदि।

प्रतिदिन पाँच बार अलग-अलग समय पर फल व सब्जियों का सेवन करें।

शराब व सिगरेट का सेवन भी कैंसर के खतरे को बढ़ाता है। प्रोसेस्ड फूड, चीनी व नमक का इस्तेमाल कम होना चाहिए।

कैसे बढ़ाएँ फलों का इनटेक

फ्रिज में फल व सब्जियाँ स्नेक के रूप में तैयार रखें। पालक व दूसरी हरी पत्तेदार सब्जियाँ सलाद पत्ते की जगह इस्तेमाल करें। फलों को दूसरे स्नेक की जगह खाएँ। कोल्ड ड्रिंक की जगह फलों का रस पीएँ। दालों या बीन्स का शोरबा खाने की अच्छी शुरुआत है।

दुनिया भर के विशेषज्ञों ने कैंसर पर हुए 7,000 से अधिक शोध रिपोर्टों का अध्ययन किया और पाँच साल तक इस पर काम किया। विशेषज्ञों ने भोजन पर विशेषरूप से ध्यान केंद्रित किया। इसमें पाया गया कि मांसाहारियों में कैंसर की आशंका अधिक होती है, चाहे उन्होंने सप्ताह में कुछ ग्राम मांस का ही सेवन क्यों नहीं किया हो।

मांसाहार के साथ मोटापा भी उन कारकों में से एक था, जो कैंसर को आमंत्रित करता है। रिपोर्ट के अनुसार मोटापे और मांसाहार के कारण आमाशय, आंत, गुर्दे, अग्नाशय (पैनक्रियाज) व स्तन में कैंसर होने का खतरा ज्यादा रहता है।

ये भी हैं खतरें

रिपोर्ट में कुछ और बातें भी सामने आई हैं–

हर रोज 50 ग्राम प्रोसेस्ड मांस कॉलेक्टरल कैंसर के खतरे को 21 प्रतिशत तक बढ़ा सकता है।

अल्कोहल (शराब) का सेवन मुँह, गले, स्तन, आँत एवं लीवर के कैंसर का खतरा बढ़ा सकता है।

फल कैसे बचाते हैं कैंसर से

फलों में ऐसे कैमिकल होते हैं जो कोशिकाओं को पूर्ण विकसित होने देते हैं। इस तरह कोशिकाओं में कैंसर होने के चांस कम होते हैं और इनमें बीमारियों के खिलाफ रेसिसटेंस ज्यादा होता है।

मांसाहार को दुत्कारते किस्से

मांस का ट्रेंड जहाँ तेजी से बढ़ रहा है, वहीं बिश्नोई समुदाय ऐसा है, जिसमें मांस के सेवन पर सख्त पाबंदी है। मान्यता है कि बिश्नोई समुदाय के धर्मगुरु जंभेश्वर को जीवों से प्रेम था। समाज को सद्मार्ग पर ले जाने के लिए उन्होंने 29 नियम बनाए थे। इनमें जीवों पर दया और शाकाहार शामिल है। इसी वजह से समाज का कोई व्यक्ति मांस नहीं खाता।

नागौर में सूफी हमीदुद्दीन नागौरी की दरगाह पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोई भी मांस खाकर नहीं जाता है। अगर कोई ऐसा करता है तो उसे परेशानी का सामना करना पड़ सकता है। सूफी के जीवनकाल में एक गर्भवती गाय का शिकार करने वाले लोगों से उन्होंने गाय की जान बख्श देने को कहा। शिकारियों ने एक नहीं सुनी। इसके बाद से ही उन्होंने शाकाहार अपना लिया।

केवल मुनष्य ने तोड़ा नियम

प्रकृति ने मांसाहारी व शाकाहारियों के लिए अलग पहचान बनाई है। जो जीभ से पानी पीते हैं जैसे- शेर, कुत्ता, बिल्ली वे मांसाहारी और जो मुँह से पानी पीते हैं जैसे- हाथी, गेंडा, बकरी, मनुष्य वे शाकाहारी होते हैं। प्रकृति के इस नियम को किसी भी जानवर ने नहीं तोड़ा। केवल मनुष्य है, जो नियम तोड़कर मांस खाता है।

अब तो मान जाइए

हम कैंसर रोगियों को शाकहार की सलाह देते हैं। मांसाहार में फाइबर न होने से आँतों में कॉम्प्लीकेशन आ जाती है। इससे कैंसर फैलता है। कई मेडिकल रिसर्च में यह बात सामने आ चुकी है। लाल मांस खानेवालों में कैंसर की आशंका कई गुना बढ़ जाती है।

डॉ० सुखविंदर नैयर, कैंसर विशेषज्ञ

सुश्रुत संहिता के निदान स्थान अध्याय-11, श्लोक 17 में स्पष्ट है कि मांसलोलुप मनुष्य का मांस दूषित होने से मांस अर्बुद (गांठ) बनता है।

डॉ० जगदीश पंचोली
प्रोफेसर, अष्टांग आयुर्वेद कॉलेज

मांस सेवन से रक्तवाहिकाओं में कोलेस्ट्रॉल जम जाता है और हार्ट में ठीक से ब्लड सप्लाई नहीं होता है। नतीजन स्किन व किडनी कैंसर की आशंका रहती है।

विनीता जायसवाल, डायटीशियन

सेब– सोडियम- 28 मिलीग्राम

फायदा– रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

लौकी– कार्बोहाइड्रेड-6 ग्राम, फाइबर 2.5 ग्राम

फायदा– कैलोरी बहुत कम ब्लड प्रेशर कम करने से सहायक।

करेला– पोटेशियम-152 मिलीग्राम विटामिन-सी, 88 मिलीग्राम।

फायदा– इंसुलिन के प्रोडेक्शन को कंट्रोल करता है।

नीबू- कैलशियम- 70 मिलीग्राम, विटामिन सी- 39 मिलीग्राम।

फायदा– दिन में एक नीबू दो बार में खाने से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

टमाटर– कैल्शियम-48 मिलीग्राम।

फायदा– नियमित रूप से खाने में शामिल करने से कैंसर रोग नहीं होता। इसमें पाए जाने वाला एंटी ऑक्सीडेंट लाइकोपेन कैंसर से दूर रखता है।

सेंटर फॉर डिसीज कंट्रोल एण्ड प्रिवेंशन ने बढ़ते मोटापे के खिलाफ मुहिम चलाने का फैसला किया है। इसके तहत लोगों को पैदल चलने, नियमित व्यायाम और शाकाहार के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

शाकाहार! क्यों ?

मांसाहार से कैंसर का खतरा रहता है। अगर बीमार जानवर का मांस खा लिया तो कैंसर तय है। ऐसे में स्वस्थ और सुखी रहने के लिए शाकाहार के अलावा कोई विकल्प नहीं है। फायदे होंगे मुफ्त में।

अपनाएँ कैसे ?

हरी सब्जियाँ और फल ज्यादा से ज्यादा खाएँ। जितना ज्यादा संभव हो पैदल चलें। इससे फेट लॉस होगा और प्रदूषण भी कम होगा।

'वुमन भास्कर' इन्दौर,
16 नवम्बर 2007 से साभार

जिन्दगी बैठी थी अपने हुश्न पर फूली हुई।
मौत ने आते ही सारा रंग फीका कर दिया॥
पं० हरीचन्द्र अख्तर

कहते हैं कि उम्मीद पर जीता है जमाना।
वो क्या करे जिसको कोई उम्मीद नहीं है॥
आसी उलदनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक रहस्यों को समेटे है जैविक घड़ी

जैविक घड़ी प्रकृति का अनमोल उपहार है। नियत समय पर नींद आना, भूख लगना आदि शारीरिक क्रियाओं का संचालन इसी घड़ी के द्वारा होता है। जैविक घड़ी शारीरिक गतिविधियों को नियंत्रित करती है और यह मेलाटोनिन नामक हॉर्मोन से नियंत्रित होती है। यह घड़ी नियत समय एवं परिस्थिति के अनुरूप हमारी मानसिक एवं भावदशा को विनिर्मित करती है, जिसकी सटीक जानकारी व्यवहार-जगत में लाभदायक सिद्ध हो सकती है। अत: जैविक घड़ी हमारे शारीरिक क्रियाकलापों को संचालित करने के साथ-साथ हमारे व्यवहार-जगत को भी प्रभावित करती है। जैविक घड़ी अनेक रहस्यों को समेटे हुए है।

मनुष्य के शरीर की जैविक घड़ी के अनुसार व्यक्ति की शरीर-कायिकी 24 घंटे के अंतराल में बदलती रहती है। इस घड़ी को नियमित-नियंत्रित करने के लिए मेलाटोनिन हॉर्मोन की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। जीवन की दैनिक क्रियाओं को सुचारु रूप से संचालित करनेवाले इस हॉर्मोन की खोज येल विश्वविद्यालय के त्वचा विज्ञान के विशेषज्ञ डॉ. आरोन लरनर ने सन् 1958 में की थी। मेलाटोनिन को एन-एसीटायल-5 मैथाक्सी ट्रीप्टामाईन भी कहते हैं। इसकी खोज से मानव जीवन का एक अनछुआ पहलू उजागर हुआ। डॉ० लरनर के अनुसार यह रसायन त्वचा में उपस्थित कोशिकाओं में वर्णकों के संघनन को बाधित करके त्वचा के रंग को गहरा होने से रोकता है। इसकी खोज के पश्चात् इस हॉर्मोन का प्रयोग विभिन्न प्राणियों एवं मनुष्यों में किया गया। प्रयोग-अध्ययन से पता चला कि मेलाटोनिन हॉर्मोन पीनियल ग्रंथी से स्रवित होता है। यह ग्रंथि मस्तिष्क के मध्य भाग में स्थित एक अंत:स्रावी ग्रंथि है, जो मटर के दाने के समान होती है। कुछ मात्रा में मेलाटोनिन नेत्र के रेटिना से भी स्रवित होता है।

मेलाटोनिन के स्रवण में एक विशेष प्रकार की दिन-रात की लयबद्धता पाई जाती है। नेत्र की प्रशासकीय झिल्ली सूर्य के प्रकाश से उद्भाषित होती है। इसकी संवेदना मस्तिष्क तक पहुँचती है और मेलाटोनिन का स्रवण बंद हो जाता है। यह केवल रात्रि में ही स्रवित होता है, अत: इसे ''निशा हॉर्मोन'' कहा जाता है तथा पीनियल ग्रंथि को 'तृतीय नेत्र' की संज्ञा दी जाती है। इस हॉर्मोन के नियमित स्राव से मानवशरीर में नियत लयबद्धता का प्रादुर्भाव होता है। यह लयबद्धता दो प्रकार की होती है। प्रथम दैनिक प्रक्रिया जैसे-सोना, उठना, भूख लगना आदि। इसे 'सरकेडियन लय' कहते हैं। ऐसी ही प्रक्रिया जब वर्षभर में दोहराई जाती है तो इसे 'सरकेअनूअल लय' कहते हैं। मानव जीवन की शारीरिक प्रक्रियाएँ अपने ढंग से पुनरावृत्ति करती हैं। यह प्रक्रिया दिन और वर्ष में भी होती है।

ऑस्ट्रेलिया में ट्रोवे विश्वविद्यालय के डॉ० जैनिरेड-मान और उनके सहयोगियों ने अपने प्रयोग-परिणामों से कुछ रोचक तथ्यों को उद्घाटित किया है। इनके अनुसार मेलाटोनिन का प्रभाव निद्राकारी होने के साथ-साथ हिप्नोटिक भी होता है। यह मनुष्य के स्वभाव को शांत और उदारवादी बनाता है। मानवीय व्यवहार के इस पक्ष को मेलाटोनिन से जोड़कर देखनेवाले वैज्ञानिकों का तो यहाँ तक कहना है कि यह अँधेरे में स्रवित होता है और ध्यानी, ऋषि-मुनि आदि अँधेरे कक्ष में दीर्घकाल तक साधना करते हैं, जिससे उनके रक्त में इस हॉर्मोन की प्रचुरता होती है। इसी वजह से ये सामान्य व्यक्तियों से अधिक उदारवादी होते हैं।

जैविक घड़ी हमारे दैनिक जीवन के क्रिया-कलापों की निरंतरता को नियमित करती है। यह हमारे स्वस्थ जीवन का प्रतीक एवं पर्याय भी है। यह कई कारणों से प्रभावित होता है। इसके प्रभाव से परिणाम बड़े घातक होते हैं। आज के जैवविदों के अनुसार आधुनिक जीवन की अव्यवस्थित एवं असंयमित जीवनशैली इसके व्यतिक्रम में सबसे बड़ी भूमिका निभाती है। सोने के समय पर जागना, खाना और इसके विपरीत कार्य करने वाले समय पर नींद लेना आदि जैविक घड़ी की लय को तोड़ते-मरोड़ते हैं। अमेरिका के टेक्सास यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर जे. राइटर का कहना है कि **यह निषेधात्मक विचारों से भी प्रभावित होती है। इनके अनुसार निषेधात्मक विचार हमारी शारीरिक क्रियाओं को सबसे पहले प्रभावित करते हैं और इसके परिणामस्वरूप हमारी जैविक घड़ी की**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लयबद्धता में कमी आती है।

रात्रि में कार्य करनेवाले लोगों की भी नियमित जैविक घड़ी में व्यवधान आ जाता है और वे अनिद्रा के शिकार हो जाते हैं। रात्रिजागरण करने वाले व्यक्ति जब दिन में सोते हैं, तो उन्हें सलाह दी जाती है कि शयनकक्ष में पूर्ण अंधकार हो, ताकि मेलाटोनिन का अधिकाधिक संश्लेषण हो सके और नींद चक्र पूरा हो। इसके अलावा जब कोई व्यक्ति किसी तीव्रगामी वाहन, यानी हवाई जहाज में यात्रा करता है तो पूर्व-पश्चिम या पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर जाते समय नियमित प्रकाशीय अवधि में बदलाव आ जाता है।

नियमित जैविक घड़ी बाधित होने से अनिद्रा, भूख की कमी, सिरदर्द और मानसिक तनाव आदि घर कर जाते हैं। एक बार इसके बाधित होने के पश्चात् इसके नियमित होने में 5 से 7 दिन लग जाते हैं। ऐसी स्थिति में मेलाटोनिन दवाओं का भी प्रयोग किया जाता है।

परिवर्द्धन-विज्ञान के विशेषज्ञों ने अपने अनुसंधान में पाया है कि शिशु एवं वाल्यावस्था में मेलाटोनिन का स्तर अधिक होता है, परंतु अवस्था एवं उम्र के बढ़ने के साथ-साथ पीनियलग्रंथि से इसके स्राव की प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है। इसी कारण बच्चों को वृद्ध लोगों की अपेक्षा अधिक एवं अच्छी नींद आती है। वृद्धों का अपनी उम्र के प्रति नकारात्मक भाव शारीरिक के साथ मानसिक रोगों को जन्म देता है, जिससे जैविक घंड़ी प्रभावित होती है। इस उम्र में सबसे अधिक अनिद्रा की शिकायत रहती है।

ऋतुजन्य परिस्थिति में जैविक घड़ी प्रभावित होती है। शीत ऋतु में रातें लंबी और दिन छोटे होते हैं। इस कारण लोगों को अधिक समय तक अंधेरे में रहना पड़ता है। सर्दी के कारण दिन में कम प्रकाश रहता है। ये सब कारक मेलाटोनिन हॉर्मोन के स्राव में सहायक होते हैं। अत: इन परिस्थितियों में नींद की अधिकता होती है। ये विकार अधिक समय तक बने रहने पर कई प्रकार की बीमारियों को जन्म देते हैं। अत: इन्हें समय रहते दूर करने की सलाह दी जाती है। वर्तमान समय में यौगिक आसनों एवं प्राणायामों के माध्यम से जैविक घड़ी की नियमितता को बनाए रखने का प्रयास किया जा रहा है। यह प्रयास उत्साहवर्द्धक सिद्ध हो रहा है।

प्राचीन ऋषियों-मनीषियों के अनुरूप आज वैज्ञानिक मानने लगे हैं कि समय-विशेष के अनुसार कार्य करना चाहिए। क्योंकि उस समय शरीर में विशेष हॉर्मोन का स्राव होता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि किसी अधिकारी विद्वान् से वैचारिक कार्य करने के लिए उसके पास प्रात:काल जाना चाहिए। किसी को यदि भावनात्मक रूप से अपने पक्ष में करना हो, तो उससे संध्या समय मिलना चाहिए। ऐसे अनेक काल एवं समय हैं, जिन्हें जान समझकर उनका कुशलतापूर्वक उपयोग किया जाता है। इस तरह जैविक घड़ी जीवन के कई अनछुए पहलुओं को समेटे हुए है। उन्हें अनावृत कर यदि इसका उपयोग किया जा सके तो इसके कई लाभ हो सकते हैं। प्राकृतिक जीवनचर्या ही इसका प्रमुख आधार है। अत: हमें संयमित, सहज, सरल प्राकृतिक जीवनचर्या को अपनाना चाहिए, ताकि जैविक घड़ी सुचारु रूप से अपना कार्य कर सके।

'अखण्डज्योति' 2006 से साभार

प्रस्तुति- निर्मलकुमार पाटौदी
22, जाय बिल्डर्स कॉलोनी,
इन्दौर (म.प्र.)

अपना स्वाभिमान

रत्नकरण्डक श्रावकाचार की कक्षा में रात्रिभोजन-त्याग का व्याख्यान करते हुए आचार्य श्री ने बताया कि पहले जैनी लोग राजदरबार में कोषाध्यक्ष जैसे बड़े-बड़े विश्वस्त पदों पर नियुक्त किये जाते थे। उन जैनी भाइयों को सारे राज्य में विश्वस्त एवं ईमानदार माना जाता था और रात्रि होने से पूर्व ही उन्हें राज्यसभा से छुट्टी मिल जाती थी, क्योंकि उनका रात्रिभोजन का संकल्पपूर्वक त्याग रहता था। इसलिए राजा भी उनकी धर्म, नियम के प्रति निष्ठा देखकर उनका उन नियमों को पालन करने में सहयोग देते थे। पहले जैनियों में संकल्प के प्रति इतनी आस्था और निष्ठा रहती थी, लेकिन बड़े दु:ख की बात है कि आज जैनी भाई स्वयं कह देते हैं कि मुझे रात में सब चलता है और यदि रात्रि भोजन त्याग का नियम भी लेते हैं तो बाहर की छूट रखते हैं। यह एक अफसोस की बात है कि आज जैनी स्वयं अपना स्वाभिमान खोते चले जा रहे हैं।

मुनि श्री कुन्थुसागरकृत 'संस्मरण' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

प्रश्न- मुख्तार ग्रंथ मे केवलज्ञान होते ही ५००० धनुष ऊर्ध्वगमन हो जाता है, ऐसा उल्लेख किया है। परन्तु कोई प्रमाण नहीं दिये हैं। क्या आगम में ऐसे प्रमाण मिलते हैं?

समाधान- आगम में ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं जिनके अनुसार, तीर्थंकर भगवान् का शरीर केवलज्ञान होते ही ५००० धनुष ऊपर उठ जाता है। समवसरण की रचना, पृथ्वी से इतने ही ऊपर की जाती है। कुछ प्रमाण इस प्रकार हैं-

१. श्री तिलोयपण्णत्ति में इस प्रकार कहा है-

सुर-णर-तिरिया रोहण-सोवाणा चउदिसासुपत्तेयं।
वीस-सहस्सा गयणे, कणयमया उड्ढ उड्ढम्मि॥७२८॥
पासम्मिपंचकोसा, चउवीरे अट्ठताल-अवहरिदा।
इगि-हत्थुच्छेहाते, सोवाणा एक्क-हत्थ-वासा य॥७३०॥

अर्थ- देवों, मनुष्यों और तिर्यंचों के चढ़ने के लिये आकाश में चारों दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में ऊपर-ऊपर स्वर्णमय बीस-बीस हजार सीढियाँ होती हैं।

भगवान् पार्श्वनाथ के समवसरण में सीढ़ियों की लम्बाई ५/४८ कोस और वीरनाथ के ४/४८ कोस प्रमाण थी। वे सीढ़ियाँ १ हाथ ऊँची और १ हाथ की विस्तार वाली थीं।

भावार्थ- २०००० सीढ़ियों की ऊँचाई = २०००० हाथ हुई। एक धनुष में चार हाथ होते हैं। अतः समवसरण की ऊँचाई २००००/४ = ५००० धनुष हुई।

२. श्री महापुराण (रचयिता-कवि पुष्पदंत) में इस प्रकार कहा है-

णिय पहणित्रेहय चंदक्कउ, समवसरणु गयणंगणि थक्कउ।
पंचसहसधणु उच्छयमाणइ, सेणिय कहियउ जिणवर णाणइ॥
१/२८॥

अर्थ- अपनी प्रभा से सूर्य और चन्द्रमा को निस्तेज करने वाला, समवसरण पाँच हजार धनुष ऊँचाई के मान से आकाश में स्थित था। हे श्रेणिक, यह मैंने जिनवर के ज्ञान से कहा।

३. श्री वीरवर्धमानचरित्र में इस प्रकार कहा है- (रचयिता भट्टारक सकलकीर्ति)

भो विंशति सहस्राङ्कमणिसोपानराजितम्।
मुक्त्वा सार्धद्विगव्यूतिं भूमेर्नभसि संस्थितम्॥१४/७०॥

अर्थ- हे भव्यो, वह बीस हजार मणिमयी सीढ़ियों से विराजित (समवसरण) था और भूतल से अढ़ाई कोस ऊपर आकाश में अवस्थित था।

४. श्री मेरुमंदर पुराण (भा० अनेकांत परिषद्) पृष्ठ १६ पर इस प्रकार कहा है-

"वह समवसरण महान् विभूति वाला, पाँच हजार धनुष ऊँचा, जिसकी बीस हजार सीढ़ी, जिस पर इन्द्रनीलमणिमय गोल भूमि बारह योजन प्रमाण समवसरण की रचना है।"

५. श्री रत्नकरंडक श्रावकाचार की टीका में पं० सदासुखदास जी ने समवशरण के वर्णन में लिखा है- 'भगवान् अर्हन्त के धर्मोपदेश देने का जो सभा स्थान है, वह समवशरण है। वह भूमि से पाँच हजार धनुष ऊँचा आकाश में बीस हजार सीढ़ियों सहित होता है।'

इस प्रकारण में यह भी ध्यान देने योग्य है कि समोशरण या समवशरण आदि शब्द सही नहीं है। सही शब्द तो 'समवसरण' ही है। श्री आदिपुराण ३३/७३ में कहा है- "इसमें समस्त सुर और असुर आकर दिव्यध्वनि के अवसर की प्रतीक्षा करते हुये बैठते हैं, इसलिये जानकार गणधरादि देवों ने इसका 'समवसरण' ऐसा सार्थक नाम कहा है।"

प्रश्न कर्त्ता- श्री आर.के. जैन एडवोकेट, जबलपुर

जिज्ञासा- क्या भगवान् को जैन पद्धति के अनुसार जमीन पर लेटकर दंडवत् प्रणाम करना उचित नहीं है।

समाधान- प्रथमानुयोग में तो भगवान् आदि को नमस्कार करते समय दण्डवत् करने का उल्लेख नहीं मिलता है। मेरी दृष्टि में जहाँ भी प्रणाम के प्रसंग आये हैं, वहाँ घुटने मोड़कर ढोक देने के ही प्रमाण उपलब्ध होते हैं। कुछ प्रमाण हम इस प्रकार हैं-

१. आदिपुराण भाग २ सर्ग ३३ में इस प्रकार कहा है-

रत्यप्रतर्क्य माहात्म्यं दूरादालोकयन् जिनम्।
प्रव्होऽभूत्स महीस्पृष्टजानुरानंदनिर्भरः॥ १२३॥

अर्थ- ऐसे अचिन्त्य माहात्म्य के धारक श्री जिनेन्द्र भगवान् को दूर से ही देखते हुये भरत महाराज आनंद से भर गये तथा उन्होंने अपने दोनों घुटने जमीन पर टेककर श्री भगवान् को नमस्कार किया।

२. आदिपुराण भाग १ सर्ग २३ में इस प्रकार कहा है-

प्रदृश्याथ दूरान्नत स्वोत्तमांगाः सुरेन्द्राः प्रणेमुर्मही स्पृष्ट जानु।
किरीटाग्रभाजां स्त्रजां मालिकाभिर्जिनेन्द्राङ्घ्रियुग्मम् स्फुटं
प्रार्चयन्तः॥ ९९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ- दर्शनकर, दूर से ही जिन्होंने अपने मस्तक नम्रीभूत कर लिये हैं, ऐसे इन्द्रों ने जमीन पर घुटने टेककर उन्हें प्रणाम किया, प्रणाम करते समय वे इन्द्र ऐसे जान पड़ते थे, मानो अपने मुकुटों के अग्रभाग में लगी हुई मालाओं के समूह से जिनेन्द्र भगवान् के दोनों चरणों की पूजा ही कर रहे हों।

३. भावप्राभृत गाथा १ की टीका में इस प्रकार कहा है-

"आचार्योपाध्यायसर्वसाधून् त्रिविधान् मुनीन् नत्वा, केन उत्तमांगेन जानुकूर्परशिरः पंचकेन प्रणिपत्येत्यर्थः।"

अर्थ- आचार्य, उपाध्याय तथा साधू इन तीन प्रकार के मुनियों को दो घुटने, दो कोहनी, और शिर इन पाँच अंगों से नमस्कार करके ग्रंथ को कहूँगा।

४. पद्मपुराण सर्ग १४ में इस प्रकार कहा है-

जानुभ्यां भुविमाक्रम्य प्रणम्य मुनिमादरात्।
अन्यानपि महाशक्ति नियमान् स समार्जयत्॥ ३७५॥

अर्थ- इसके सिवाय उसने (दशानन ने) पृथ्वी पर घुटने टेक मुनिराज को आदरपूर्वक नमस्कार कर और भी बड़े-बड़े नियम लिये। पद्मपुराण भाग १ पृष्ठ २१ पर भी इसी प्रकार वर्णन है।

इन सभी प्रमाणों से ज्ञात होता है कि शास्त्रों में दंडवत् प्रणाम का उल्लेख नहीं मिलता है। कुछ साधर्मी भाई अन्य धर्म के लोगों को देखकर मंदिर जी में जो दंडवत् करने लगे हैं, वह प्रथा उचित नहीं है।

प्रश्न- तत्त्वार्थ सूत्र में पाँचों व्रतों की ५-५ भावनाओं का वर्णन है। परन्तु सम्यक्त्व की नहीं। तो क्या अन्य ग्रंथों में सम्यग्दर्शन की भावनाओं का वर्णन उपलब्ध है या नहीं?

समाधान- श्री आदिपुराण सर्ग २१ श्लोक नं. ९७ में सम्यग्दर्शन की सात भावनायें इस प्रकार कहीं हैं-

संवेग-प्रशम-स्थैर्यमसंमूढत्वमस्मयः।
आस्तिक्यमनुकंपेति ज्ञेयाः सम्यक्त्वभावनाः। ९७।

अर्थ- संसार से भय होना, शांत परिणाम होना, धीरता रखना, मूढताओं का त्याग करना गर्व नहीं करना, श्रद्धा रखना और दया करना, ये सम्यग्दर्शन की ७ भावनायें जानने योग्य हैं।

प्रश्नकर्त्ता- सौ. पुष्पलता, सागर

प्रश्न- उत्तम भोगभूमि (देवकुरु, उत्तरकुरु आदि) में जघन्य आयु होती है या नहीं?

समाधान- देवकुरु, उत्तरकुरु आदि शाश्वत भोगभूमियों में भी जघन्य आयु का विधान शास्त्रों में उपलब्ध होता है। कुछ आगम प्रमाण इस प्रकार हैं-

१. श्री धवला पु० १४ पृष्ठ ३९८-३९९ में इस प्रकार कहा है-

यहाँ शंका है कि उत्तरकुरु और देवकुरु के सब मनुष्य तीन पल्य की स्थिति वाले ही होते हैं, इसलिये तीन पल्य की स्थिति वाले के यह विशेषण युक्त नहीं है। इसका समाधान करते हुये कहते हैं कि यह कोई दोष नहीं है। क्योंकि उत्तरकुरु और देवकुरु के मनुष्य तीन पल्य की स्थिति वाले ही होते हैं ऐसा कहने का फल वहाँ पर शेष आयु स्थिति के विकल्पों का निषेध करना है। और इस सूत्र को छोड़कर अन्य सूत्र नहीं है, जिससे यह ज्ञान हो कि उत्तरकुरु और देवकुरु के मनुष्य तीन पल्य की स्थिति वाले ही होते हैं, अतः यह विशेषण सफल है। अथवा एक समय अधिक दो पल्य को लेकर, एक समय कम तीन पल्य तक के स्थिति विकल्पों का निषेध करने के लिये सूत्र में ३ पल्य की स्थिति वाले पद का ग्रहण किया है। **सर्वार्थसिद्धि के देवों की आयु जिस प्रकार निर्विकल्प होती है, उस प्रकार देवकुरु-उत्तरकुरु की आयु निर्विकल्प नहीं होती क्योंकि इस प्रकार की आयु की प्ररूपणा करने वाला सूत्र और व्याख्यान उपलब्ध नहीं होता।**

२. श्री आचारसार अधिकार ११ में इस प्रकार कहा है-

जघन्य मध्यमोत्कृष्ट भोगभूमिष्ववस्थितम्।
स्योदेकद्वित्रिपल्यायुर्नित्या स्वन्यासुतद्वरम्॥ ५६॥
पूर्व कोट्येकपल्यं च पल्य द्वयमिति त्रयम्।
समयेनाधिकं तासु नृतिर्यक्ष्वस्वरं क्रमात्॥ ५७॥

अर्थ- नित्य अर्थात् शाश्वत तथा अन्य अर्थात् अशाश्वत, जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट भोगभूमि में अवस्थित उन जीवों की उत्कृष्ट आयु एक, दो तथा तीन पल्योपम है। ५६।

उन्हीं भोगभूमियों में मनुष्य और तिर्यंयों में, जघन्य आयु क्रम से एक समय अधिक पूर्व कोटि, एक समय अधिक एक पल्य और एक समय अधिक दो पल्य है। ५७।

उपरोक्त प्रमाणों के अनुसार देवकुरु तथा उत्तरकुरु में जघन्य आयु दो पल्य एक समय तथा उत्कृष्ट आयु ३ पल्य माननी चाहिये।

प्रश्न- यदि दीक्षा गुरु (आचार्य) शिथिलाचारी हो गया हो तो साधु उसकी वंदना करे, प्रवचन से पूर्व उसकी जय बोले या न बोले। कृपया शास्त्रीय प्रमाण से समझायें।

समाधान- साधुओं के आचरण को बताने वाला प्राचीनतम प्रामाणिक ग्रंथ मूलाचार माना जाता है। इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूलाचार में, उपर्युक्त प्रश्न के समाधान में इस प्रकार कहा है-

णो वंदिज्ज अविरदं, मादा पिदुगुरु णरिंद अण्णतित्थं व।
देसविरदं देवं वा, विरदोपासत्थपणगं वा॥ ४९४॥

अर्थ- अविरत माता-पिता व गुरु की, राजा की, अन्य तीर्थ की, देशविरत की, अथवा देवों की या पार्श्वस्थ आदि पाँच प्रकार के मुनि की वह विरत मुनि वंदना न करे।

आचारवृत्ति : असंयत माता-पिता की, असंयत गुरु की अर्थात् **यदि दीक्षा गुरु यदि चारित्र में शिथिलभ्रष्ट है या श्रुत गुरु यदि असंयत है अथवा चारित्र में शिथिल है तो संयत मुनि उनकी वंदना न करे।** वह राजा की, पाखंडी साधुओं की शास्त्रादि से प्रौढ़ भी देशव्रती श्रावक की या नाग, यक्ष, चन्द्र, सूर्य इन्द्रादि देवों की वंदना न करे। तथा पार्श्वस्थ आदि पाँच प्रकार के मुनि, जो कि निर्ग्रंथ होते हुये भी दर्शन-ज्ञान-चारित्र में शिथिल हैं, उनकी भी वंदना न करे।

विरत मुनि मोहादि से असंयत माता-पिता आदि की या अन्य किसी की स्तुति न करे। भय से या लोभ आदि से राजा की स्तुति न करे। **ग्रहों की पीड़ा आदि के भय से सूर्य आदि की पूजा न करे।** शास्त्रादि ज्ञान के लोभ से अन्य मतावलम्बी पाखण्डी साधुओं की, स्तुति न करे। आहारादि के निमित्त श्रावक की स्तुति न करे एवं स्नेह आदि से पार्श्वस्थ आदि मुनियों की स्तुति न करे। **तथैव अपने गुरुजी यदि हीन चारित्र हो गये हैं तो उनकी भी वंदना न करे।** अन्य भी जो अपने उपकारी हैं, किन्तु असंयत हैं, उनकी भी वंदना न करे।

प्रश्नकर्त्ता- डॉ० अरविन्द कुमार जैन, देहली

प्रश्न- क्या जैन शास्त्रों में प्राणायाम का वर्णन मिलता है? क्या प्राणायाम, धार्मिक दृष्टि से ध्यान में सहायक है या नहीं?

उत्तर- जैन शास्त्रों में प्राणायाम का वर्णन मिलता है। प्राणायाम क्या है? श्वास को धीरे-धीरे अंदर खींचना कुंभक है, उसे रोके रखना पूरक है, और फिर धीरे-धीरे बाहर छोड़ना रेचक है। ये तीनों मिलकर प्राणायाम संज्ञा को प्राप्त होते हैं। जैनेतर लोग ध्यान व समाधि में इसको प्रमुख मानते हैं परंतु जैनाचार्य इसको इतनी महत्ता नहीं देते। क्योंकि चित्त की एकाग्रता हो जाने पर श्वासनिरोध स्वतः होता है। इस संबंध में कुछ प्रमाण इस प्रकार हैं-

१. श्री राजवार्तिक अध्याय ९ सूत्र नं. २७ की टीका में इस प्रकार कहा है-

प्रश्न- श्वासोच्छ्वास के रोकने को ध्यान कहना चाहिये।

उत्तर- नहीं, क्योंकि इसमें श्वासोच्छ्वास रोकने की वेदना से शरीरपात होने का प्रसंग है। इसलिये ध्यानावस्था में श्वासोच्छ्वास का प्रचार स्वाभाविक होना चाहिए।

२. श्री आदिपुराण पर्व २१ श्लोक नं. ६५-६६ में इस प्रकार कहा है-

अतिशय तीव्र प्राणायाम होने से अर्थात् बहुत देर तक श्वासोच्छ्वास के रोक रखने से इन्द्रियों को पूर्ण रूप से वश में न करनेवाले पुरुष का मन व्याकुल हो जाता है। जिसका मन व्याकुल हो गया है उसके चित्त की एकाग्रता नष्ट हो जाती है। और ऐसा होने से उसका ध्यान भी टूट जाता है। इसलिए शरीर से ममत्व छोड़ने वाले मुनि के ध्यान की सिद्धि के लिये मंद-मंद उच्छ्वास लेना और पलकों के लगने उघडने आदि का निषेध नहीं है।

३. परमात्मप्रकाश २/१६२ की टीका में इस प्रकार कहा है-

पातंजलिमत-वाले वायु धारणा रूप श्वासोच्छ्वास मानते हैं। वह ठीक नहीं है। क्योंकि वायुधारणा वांछापूर्वक होती है। वांछा तो मोह से उत्पन्न विकल्प रूप है। वांछा मोह का कारण है। वायुधारणा से मुक्ति नहीं होती, क्योंकि वायुधारणा शरीर का धर्म है, आत्मा का नहीं। यदि वायुधारणा से मुक्ति होवे तो वायुधारणा करने वालों को इस पंचम काल में मोक्ष क्यों न होवे? अर्थात् वायुधारणा से मुक्ति नहीं होती। --- इससे देह आरोग्य होता है, सब रोग मिट जाते हैं, शरीर हल्का हो जाता है, परंतु इससे मुक्ति नहीं होती है।

४. ज्ञानार्णव सर्ग २९ व ३० में इस प्रकार कहा है-

प्राणायाम में पवन के साधन से विक्षिप्त हुआ मन स्वास्थ्य को प्राप्त नहीं होता। इस कारण भले प्रकार की समाधि के लिये प्रत्याहार (इन्द्रियों तथा मन को विषयों से हटाकर ध्येय वस्तु पर लगाना) करना श्रेष्ठ है। पवन का चातुर्य शरीर को सूक्ष्म-स्थूलादि करने रूप अंग का साधन है, इस कारण मुक्ति की वांछा करने वाले मुनि के लिये, प्राणायाम प्रायः विघ्न का कारण है। प्राणायाम में प्राणों को रोकने से पीड़ा होती है, पीड़ा से आर्तध्यान होता है, और उस आर्तध्यान से तत्त्वज्ञानी मुनि अपने लक्ष्य से छूट जाता है। फिर भी मन की एकाग्रता के लिये प्राणायाम कथंचित् इष्ट भी है।

1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी
आगरा- 282002 (उ.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

पूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी दमोह में

श्रमण संस्कृति उन्नायक, सराकोद्धारक, शिक्षा प्रसारक जैन संत पूज्य उपाध्यायरत्न 108 श्री ज्ञानसागर जी महाराज का संस्कारधानी जबलपुर में सफल चातुर्मास उपरांत दमोह जिला की ओर मंगल विहार हुआ। जबलपुर से पद विहार करते हुये महाराजश्री बेलखाडू, बोरिया, कटंगी, जबेरा होते हुये बुंदेलखण्ड की पावन भूमि में प्रविष्ट होकर मानव मात्र को अहिंसा का सन्देश देते हुए दिनांक 15 फरवरी 08 को ग्राम नोहटा में पधारे। ग्राम नोहटा के समीप श्री दिगम्बर जैन अतिशय तीर्थ क्षेत्र आदीश्वरगिरि के दर्शन करने के उपरान्त आपके पावन सान्निध्य में ग्राम नोहटा में एक सर्वधर्म सभा का आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न धर्मों के विद्वानों ने अपने सुचिन्तित विचार रखे। इसी के साथ ग्राम नोहटा में ग्राम पंचायत स्तर श्रेष्ठ विद्यार्थियों का प्रतिभा सम्मान कार्यक्रम रखा गया। दिनांक 17 फरवरी 08 को पूज्य उपाध्याय श्री दमोह नगर में प्रविष्ट हुये। जैन पंचायत दमोह के पदाधिकारियों तथा काफी संख्या में भक्तजनों में जबलपुर नाका पहुँचकर गाजे-बाजे के साथ महाराजश्री की भव्य अगवानी की। महाराजश्री ने महाराणा चौक, बेलाताल, जिला जेल, कीर्ति स्तम्भ, अंबेडकर चौक, बिंदन चौराहा होते हुए जैन धर्मशाला में पदार्पण किया। लोगों ने जगह-जगह महाराजश्री की आरती उतारी व पादपक्षालन किया।

डॉ० एल० सी० जैन, दमोह

श्री आदिनाथाय नमः

आर० के० मार्बल के वर्तमान पितामह श्री कंवरलाल जी चतरदेवीजी पाटनी के प्रपौत्र अशोककुमारजी सुशीलाजी पाटनी के सुपौत्र एवं श्री विनीत शुचि के सुपुत्र चिंरजीवी आदि का प्रथम जन्मोत्सव दिवस दिनांक 17 जनवरी, 2008 को धार्मिक एवं मांगलिक कार्यक्रमों द्वारा पूर्ण सादगी से हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया।

इस अवसर पर सांगानेर (जयपुर) के अतिशयकारी आदिनाथ बाबा के जिनालय (संघीजी के मंदिर जी) में श्री चौंसठ ऋद्धि विधान पूजा का संगीतमय आयोजन मूर्द्धन्य विद्वान् श्री रतनलाल जी सा० बैनाड़ा आगरा के निर्देशन में किया गया। प्रारम्भ में श्री मूलनायक प्रतिमाजी का अभिषेक एवं जिन प्रतिमाओं पर बृहत् शान्तिधारा की गई। तत्पश्चात् विधान पूजन में पाटनी परिवार के सभी सदस्यों के अतिरिक्त स्वजनों, परिजनों एवं आमंत्रित सज्जनों ने उत्साहपूर्वक भाग लेकर पुण्यार्जन किया। श्री रतनलाल जी बैनाड़ा (जो आदि के बड़े नाना होते है- सपत्नीक पधारे थे) ने पूजा को रोचक बनाते हुए चौंसठ ऋद्धियों के शब्दार्थ, भावार्थ एवं विशद् व्याख्या द्वारा विवेचन करते हुए पूजार्थियों के उपयोग को केन्द्रित रखते हुए लाभान्वित किया।

इस अवसर पर जिनालय एवं परिसर को अत्यन्त मनोहारी ढंग से सजाया गया था। प्रातः 9 बजे से 2.30 बजे तक चली पूजा के पश्चात् जन्मोत्सव कार्यक्रमों में शाकाहारी केक की रस्म अदायगी के साथ ही स्वरूचि भोजन के आयोजन में अनेकों गणमान्य अतिथियों को आमंत्रित किया गया था। जिनमें चिंरजीवी आदि के नाना श्री हीरालाल जी बैनाड़ा सपत्नीक पधारे थे। शीला जी डोंड्या तथा महासमिति की 30-40 महिलाओं ने भी पुण्यार्जन किया था।

इस मंगल बेला पर उपस्थित महानुभावों ने चिंरजीवी आदि को सुखद, स्वस्थ्य जीवन का आशीर्वाद देते हुए उनके दीर्घजीवन की मंगल कामना की।

इस पुनीत अवसर पर पाटनी परिवार की ओर से श्री जिनालय को चांदी की एक झारी व एक लाख पचास हजार की नकद राशि सादर भेंट की।

कुसुम कटारिया
दिगम्बर जैन महिला महासमिति,
किशनगढ़ संभाग

जेल भेजे जाएँ कानून तोड़ने वाले : हाइकोर्ट

जबलपुर। "मध्यप्रदेश हाइकोर्ट ने शहर की सड़कों के किनारे मांस-मछली के व्यापार के रिवाज को आड़े लेते हुए कहा कि जो नियम-कानून का पालन न करें उन्हें सीधे सलाखों के पीछे भेजो।" उक्त आशय का समाचार भोपाल, मध्यप्रदेश से प्रकाशित सुप्रसिद्ध दैनिक समाचार पत्र 'राज एक्सप्रेस', में शनिवार, 2 फरवरी, 2008 के पृष्ठ 5 पर 'मध्यप्रदेश' शीर्षक के अन्तर्गत 'राज न्यूज नेटवर्क' के माध्यम से प्रकाशित हुआ है।

जस्टिस दीपक मिश्रा और जस्टिस प्रकाश श्रीवास्तव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की युगलपीठ ने दिनांक 31.01.2008 को एक जनहित याचिका का निराकरण करते हुए कहा कि अधिकारी वर्ग सख्ती से कार्रवाई करें, ताकि किसी नागरिक को परेशानी का सामना न करना पड़े। हाइकोर्ट ने इस बारे में अधिकारियों को दिशा-निर्देश भी जारी किए हैं। यह जनहित याचिका सुरेशचन्द्र जैन (सुरेशचन्द्र जैन एवं अन्य, विरुद्ध मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य, रिट पिटीशन नम्बर-15787/2005, दिनांक 6.12.05, त्रय याचिकाकर्त्ता- 1. सुरेशचन्द्र जैन बरगीवाले, 748 सराफा वार्ड, जबलपुर, अथवा- मे. सुनील ट्रेडर्स, 1010 मछरहाई, जबलपुर-482 002, मध्यप्रदेश, फोन (0761)2611121, 2650001, मो. 94243-05778, 94251-83884, 2. सुनील जैन, 139-शिवनगर, जबलपुर, मध्यप्रदेश, 3. अशोक जैन, विद्यासागर काम्प्लेक्स, तिलक भूमि की तलैया, जबलपुर, मध्यप्रदेश) आदि की ओर से दायर की गई थी। याचिका में कहा गया था कि शहर की सड़क किनारे खुले रूप से मांस और मछली बिक रही हैं। इससे न केवल पर्यावरण प्रदूषित होता है, बल्कि उसके कारण आवारा कुत्ते वहाँ एकत्रित होते हैं। याचिका के अनुसार इन मार्केटों के आसपास से गुजरने वाले राहगीरों को बदबू का सामना करना पड़ता है, जिससे उनकी भावनाएँ आहत होती हैं।

याचिका में कहा गया है कि नियमों के तहत मांस और मछली केवल उन मार्केटों में बिक सकती हैं, जो नगर निगम द्वारा अधिसूचित किए गए हों याचिका में आरोप था कि इसके विपरीत पूरे शहर में मांस की बिक्री खुलेआम हो रही है।

याचिका में इस रिवाज पर अंकुश लगाए जाने हेतु मध्यप्रदेश शासन के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, गृह मंत्रालय, नगरीय प्रशासन एवं विकास मंत्रालय, बल्लभ भवन, भोपाल, मध्यप्रदेश तथा कलेक्टर-जबलपुर एवं आयुक्त-नगर निगम, जबलपुर से भी अनुरोध किया गया था। मामले पर हुई सुनवाई के दौरान आवेदकों की ओर से अधिवक्ता ग्रीष्म जैन (114-मोहित चेंबर, चंचलाबाई कॉलेज रोड, राइट टाउन, जबलपुर-482 002, मध्यप्रदेश, मो. 94251-51523) ने अपना पक्ष रखा। शासन की ओर से शासकीय अधिवक्ता दीपक अवस्थी एवं न. नि. की ओर से अधिवक्ता शरद वर्मा ने कहा कि उन्हें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि वे नियमों से बँधे हुए हैं।

सुनवाई के बाद अदालत ने कहा कि अधिकारियों को चाहिए कि वे अपने कर्तव्यों को गंभीरता से निभाएँ। ऐसा होने पर ही नागरिक अपने आपको असहाय महसूस नहीं कर सकेंगे। साथ ही उनमें कानून का पालन करने की जिम्मेदारी का अहसास होगा। इस मत के साथ अदालत ने उम्मीद जताई कि सक्षम अधिकारी इस मामले पर भी गंभीरतापूर्वक कार्रवाई करेंगे।

राज्य शासन के द्वारा बनाए गए नियमों के उल्लंघन होते हुए देखकर सुरेशचन्द्र जैन एवं अन्य तथा अधिवक्ता ग्रीष्म जैन द्वारा किए गए सम्यक् प्रयास के लिए ये सभी जन निश्चित रूप से बधाई के पात्र हैं। वहीं राज्य शासन के सम्बन्धित मंत्रालय, विभाग एवं अधिकारियों से भी प्रदेश भर में जनता के हितों को दृष्टि में रखकर न्यायालय के इस निर्णय का अनुपालन कठोरतापूर्वक कराए जाने की अपेक्षा है। ऐसा नहीं किए जाने पर उक्त मंत्रालय, विभाग एवं अधिकारीगण फिर न्यायालय की अवमानना के दोषी माने जाएँगे।

पाठकों से अपेक्षा है कि जहाँ वे अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ याचिकाकर्त्ताओं तथा अधिवक्ता महोदय को भी प्रेषित करें, वहीं मध्यप्रदेश के माननीय राज्यपाल राजभवन, भोपाल और माननीय मुख्यमंत्री, मुख्य सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, गृह मंत्रालय तथा नगरीय प्रशासन एवं विकास मंत्रालयों के विभागीय सचिवों के बल्लभ भवन, भोपाल, मध्यप्रदेश के पतों पर एवं कलेक्टर-जबलपुर, मध्यप्रदेश तथा आयुक्त-नगर निगम, जबलपुर मध्यप्रदेश आदि को पत्र या ई-मेल प्रेषित करके इस निर्णय को प्रभावी रूप से अमल में लाए जाने हेतु लिखें। साथ ही साथ याचिकाकर्त्ताओं या अधिवक्ता महोदय से सम्पर्क कर न्यायालयीन आदेश की एक सत्यापित प्रति प्राप्त कर अपने नगर के स्थानीय निकाय के वरिष्ठ अधिकारियों से उस पर अविलम्ब रूप से अमल किए / कराए जाने हेतु भी सार्थक प्रयास करें। अन्य प्रान्तों के जागरुक पाठक, कार्यकर्ता या संस्थाएँ भी इस याचिका के अनुरूप ही अपने राज्य के उच्च न्यायालय में नियमों का उल्लंघन होते हुए देखकर, उनके समीचीन परिपालन किए जाने हेतु जनहित याचिका दाखिल कर न्यायालय से योग्य दिशा-निर्देश प्रदान करने हेतु निवेदन कर सकते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिनाथ स्तवन : एक भावार्थ

श्री सुरेश जैन 'सरल'

शब्दलोक की संरचना में, जहाँ उपस्थित सभी वर्ण हैं
उनमें 'अ' अक्षर प्राचीन है
इसी तरह हे आदिनाथ! तुम आदि-पुरुष हो इस पृथ्वी पर
पुराण-पुरुषों में प्रथम पुरुष! हे!
तुम्हें नमन है, तुम्हें नमन है।

मानव यदि कर सका न पालन आदिनाथ की शिक्षाओं का
तो मानव का ज्ञान
किताबी या जिह्वा पर सधा शब्द-नाद
जीवित भ्रम है, निरा निरर्थक।

चरण कि जिनके पड़ें कमल पर, कमल कमल जो चलते जाते
उन प्रभु के पावन चरणों में जो मानव शरणागत होता
दीर्घ-काल तक जीवित रहता और जगत में सुख पाता है।

धन्य धन्य वह मनुज
विनत जो आदिनाथ के श्रीचरणों में
वह न रखता प्रीत किसी से न ही घृणा
समता-भाव कभी न खोता, नहीं कहीं उसको दुःख होता।

जो नर नित उत्साह-पूर्वक प्रभु गुणगान किया करता है
और आत्मस्थ रहा करता है
भले-बुरे वह कर्म विनशता, दुखःदायी फल नहीं भोगता।

परम जितेन्द्रिय ईश हमारे, प्रशस्त मार्ग सबको दिखलाते
चलता जो उस पथ पर सविनय
चिरजीवी हो जाता है, दिशा-दिशा यश छा जाता है।

जो आते हैं शरण तुम्हारी हे आदीश्वर!
वे भव-भय से, विघ्न-व्याधि से, बच जाते हैं
सदा तिहारा गुण गाते हैं।

वैभव की हो सेज जहाँ पर, इंद्रिय-सुख भी सहज प्राप्त हो
ऐसे कुत्सित आयामों को तज, दूरी रखने की सक्षमता
अक्सर वे नर ही पाते हैं-
जो मुनियों के उपास्य आदिनाथ के चरण-कमल में
मन-मस्तिष्क लगा देते हैं, शुभ औ' लाभ भुला देते हैं।

धर्म जनित सुख ही यथार्थ हैं, शेष सभी सुख
काम-धाम के दाम-नाम के, लज्जा मात्र दिलाते जग से
या पीड़ा के कारण बनते, सो धर्मजन्य सुख ही अपनाओ।

जो जो कार्य धर्म-संगत हों
क्रियान्वयन उन्हीं का करिये और उन्हीं पर दृष्टि थामिये
यह है गुणीजनों का अभिमत,
किन्तु कार्य जो धर्म विमुख हों उनसे सदा विरक्ति राखिये
नामोच्चार तक व्यर्थ है उनका।

405 गढ़ाफाटक, जबलपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

UPHIN/2006/16750

मुनि श्री क्षमासागर जी की कविताएँ

सोच

एक वे हैं
जो ये सोचकर
जी रहे हैं
कि एक दिन
मरने का तय है
तो आज अभी
ठाठ से जियो
एक वे हैं
जो ये सोचकर
मर रहे हैं
कि आज अभी
यदि मौत आ जाए
तो शान से मरो
ये तो हम हैं
जो इस सोच में
न जी पा रहे हैं
न मर पा रहे हैं
कि वे क्यों
शान से मर रहे हैं
कि वे क्यों
ठाठ से जी रहे हैं?

काँधे

मुझे मौत में
जीवन के-
फूल चुनना है
अभी मुरझाना
टूटकर गिरना
और अभी
खिल जाना है
कल यहाँ-
आया था
कौन, कितना रहा
इससे क्या ?
मुझे आज अभी
लौट जाना है
मेरे जाने के बाद
लोग आएँ
अरथी सँभालें
काँधे बदलें
इससे पहले
मुझे खुद सँभलना है।
मौत आये
और जाने कब आये
अभी तो मुझे
सँभल-सँभलकर
रोज-रोज जीना
और रोज-रोज मरना है।

'अपना घर' से साभार

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, 210, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं 1/205 प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित। **संपादक :** रतनचन्द्र जैन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org